अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-42, अंक-17, 16-30 अप्रैल, 2019

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यांजगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

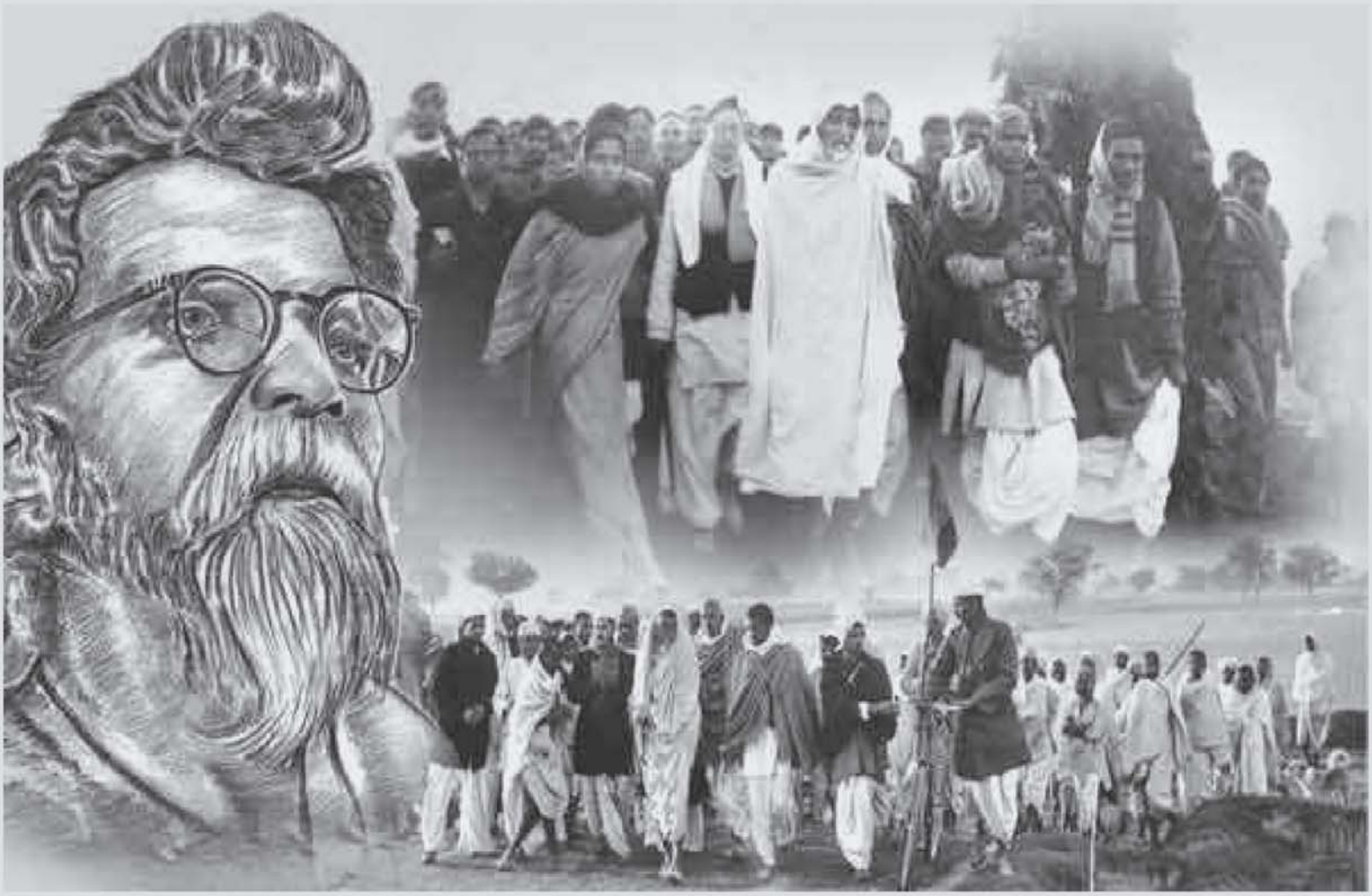

- परागा चोलकर
- महादेव विद्रोही
- गौरांग महापात्र
- गिरिराज किशोर
- अव्यक्त
- लक्ष्मी दास

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 42, अंक : 17, 16-30 अप्रैल, 2019

अध्यक्ष
महादेव विद्रोही

संपादक
बिमल कुमार
सहसंपादक
प्रेम प्रकाश
09453219994
संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'
प्रो. सोमनाथ रोडे अरविन्द अंजुम,
रमेश ओझा अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

एक प्रति	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. सुनहरा पन्ना... 3
3. आवरण कथा... 5
4. वर्तमान के संदर्भ में भूदान... 8
5. चिन्तन... 9
6. प्रसंगवश... 11
7. धारावाहिक... 12
8. ग्राम-स्वराज्य हासिल करना है... 14
9. भूदान प्रश्नोत्तरी 15
10. आइये करके सीखें... 16
11. वातायन... 17
12. लोक-विमर्श... 18
13. गतिविधियां... 19
14. कविता... 20

संपादकीय

भूमि का सवाल और स्वराज्य

भूमि का सवाल और भूमि के इर्द-गिर्द समाज व संस्कृति के निर्माण का सवाल हमारे सार्वजनिक विमर्श के बाहर हो गया है। आजादी की लड़ाई के दौरान, गांधीजी ने जिस नये भारत के निर्माण की योजना बनायी थी, उसके आधार में ग्राम समाज था। और ग्राम-समाज का निर्माण प्राकृतिक जीवन के आधारों व स्रोतों की बुनियाद पर निर्मित होना था।

यहां यह स्पष्ट होना जरूरी है कि भूमि व्यापक अर्थ में संपूर्ण प्राकृतिक विरासत है—जल, जंगल, खेती की जमीन, बाग, खनिज आदि सब इनमें शामिल हैं। आजादी का एक आयाम यह भी था कि प्राकृति की ये विरासतें व्यक्तिगत स्वामित्व के दायरे में तथा बाजार के दायरे में नहीं आयेंगी। एक परिवार जितनी जमीन पर खेती कर सकता है, उससे ज्यादा जमीन उसके पास नहीं होगी। यानि जमीन किसी भी स्थिति में श्रम के शोषण का माध्यम नहीं बनेगी। आजादी के बाद के प्रारंभिक 25 वर्षों तक सर्वोदय, समाजवादी तथा साम्यवादी आंदोलन इसी विचार के इर्द-गिर्द खड़े किये गये। ग्राम का निर्माण यानि एक ऐसी बुनियादी इकाई का निर्माण जहां श्रम का शोषण न हो, श्रमिक का नियंत्रण उत्पादन के साधनों पर हो तथा ग्राम समाज के अंदर असमानता न हो। ऐसी ग्राम इकाई में स्वराज्य का भी दर्शन हो, इसलिए सर्वोदय ने ग्राम-स्वराज्य की परिकल्पना को सामने रखते हुए अपने भूदान आंदोलन को आगे बढ़ाया।

लेकिन तथाकथित हरित क्रांति के बाद किसान आंदोलन की दिशा बदल गयी। पूर्व में जो जमींदार थे व बड़े किसान थे उन्होंने मध्यम वर्ग के किसानों के साथ मिलकर एक नया सामाजिक गठजोड़ किया। इनकी मांग भूमि व किसान के रिश्तों में बुनियादी परिवर्तन लाना नहीं था। बल्कि ये सामाजिक गठजोड़ खेती में प्रयुक्त होने वाले आगतों (Inputs) पर सब्सिडी की मांग तथा उपज के लाभकारी मूल्य पर जोर डाल रहा था। इसके दो परिणाम हुए। एक तो यह कि कृषि क्षेत्र में आगत एवं कृषि उपज दोनों अधिकाधिक बाजार पर निर्भर होते गये और कालांतर में पूंजीवादी बाजार के शिकंजे में कसते चले गये। दूसरा परिणाम यह हुआ कि किसान आंदोलन अब भूमिहीन किसानों, सीमांत किसानों तथा बटाईदारों के हितों का प्रतिनिधित्व नहीं करता। इन सबके परिणामस्वरूप ग्राम पुनर्रचना का कार्य कमजोर पड़ गया।

पूंजीवादी बाजार का शिकंजा जैसे-जैसे कसता गया, वैसे वैसे बहुराष्ट्रीय कंपनियों का दखल कृषि क्षेत्र में बढ़ता गया। बीज, उर्वरक, कीटनाशक आदि सभी आगत उनके नियंत्रण में होते चले गये। वाणिज्यिक खेती की उपज के मूल्य भी उन्हीं के द्वारा तय होने लगे। मोटे अनाज तथा वर्षा आधारित खेती घाटे का सौदा होते चले गये। भूमि के स्वामित्व का सवाल भी उलटी दिशा में चल पड़ा है। कान्ट्रेक्ट फार्मिंग (अनुबंध के माध्यम से कारपोरेट जगत की मांग पर आधारित खेती) की शुरुआत हो चुकी है। अगला कदम कारपोरेट खेती की तरफ होगा जिसमें किसान अपनी भूमि किसी कारपोरेट इकाई को एक निश्चित राशि के बदले निश्चित समय के लिए उपलब्ध करायेगा। इसे विपरीत जोतदारी (Reverse Tenancy) भी कह सकते हैं। और अंततः कारपोरेट इकाइयां खेती का स्वामित्व ग्रहण कर लेंगी।

हमने पहले ही जिक्र किया कि खेती ही नहीं बल्कि प्रकृति में उपलब्ध सभी संसाधनों और स्रोतों को पूंजीवादी बाजार के दायरे में लाया जा रहा है। और इन संसाधनों व स्रोतों के आधार पर जीवन यापन करने वाले परंपरागत समुदायों को इनसे बेदखल किया जा रहा है। आज आवश्यकता है कि जल-जंगल-जमीन-खनिज व अन्य प्राकृतिक स्रोतों को लोक स्वामित्व के अंतर्गत लाने का आंदोलन खड़ा किया जाये। और इसके लिए इन प्राकृतिक स्रोतों के आधार पर जीवनयापन करने वाले परंपरागत समुदायों को एकजुट करके उनके स्वराज्य की दिशा में बढ़ा जाये। ग्रामस्वराज्य को और अधिक व्यापक संदर्भ में खड़ा करने का आंदोलन सत्याग्रह, बहिष्कार एवं वैकल्पिक रचना के कार्यक्रमों पर आधारित होगा। भूदान और ग्रामस्वराज्य के आंदोलन को आगे ले जाने की जिम्मेदारी हम पर है।

आइये देखें कि कैसे व्यक्तिगत मालिकी का विसर्जन करके ग्रामस्वराज्य की अनूठी अवधारणा और उसकी स्थापना के सूक्ष्म बीज विनोबा के भूदान यज्ञ से अंकुरित हुए। भूदान आंदोलन, उसके प्रवाह और उसकी परिणतियों का एक बेबाक आकलन प्रस्तुत करता हुआ 'सर्वोदय जगत' का यह अंक आपसे आपकी प्रतिक्रियाओं की अपेक्षा करता है। **–बिमल कुमार**

सुनहरा पन्ना

भूदान का सूत्रपात

❑ पराग चोलकर

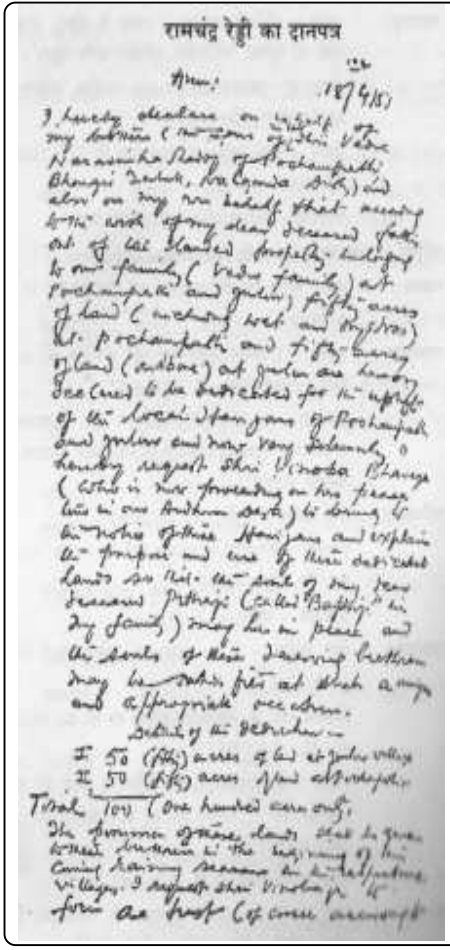
रामचंद्र रेड्डी का दानपत्र

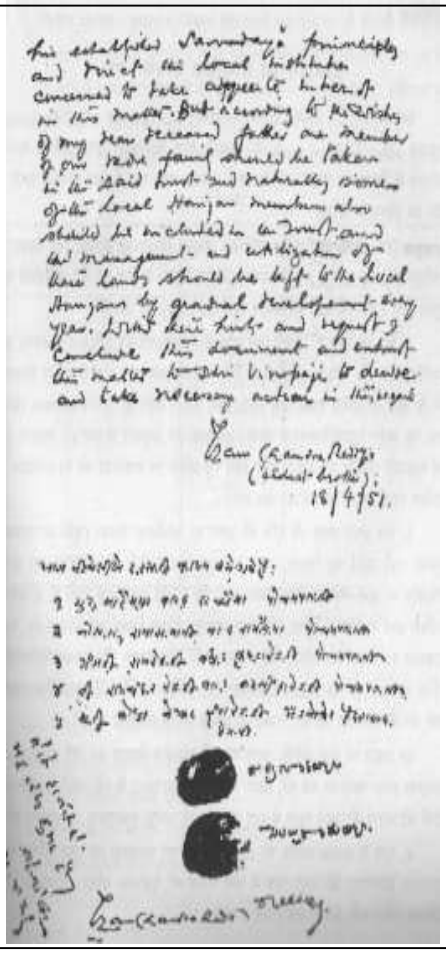

वी. रामचन्द्र रेड्डी

पोचमपल्ली दंडकारण्य का पहला पड़ाव था। मुख्य रास्ते से दूर, जंगल, पहाड़ियों से गुजर कर दस मील का रास्ता तय कर, सबेरे करीब सात, साढ़े सात बजे यात्री दल पोचमपल्ली पहुंचा, तब उसका उत्साह से स्वागत हुआ। पोचमपल्ली 700 घरों का एक बड़ा गांव। तीन हजार के करीब जनसंख्या, उसमें दलित 219, बुनकर 643 और 2000 भूमिहीन। पोचमपल्ली में दलित और धोबी ये दो समुदाय खेती का काम सामुदायिक तरीके से करते आये थे। उनके परिवार अलग-अलग समूहों में बंटे थे। ये समूह साथ काम करते थे और मजदूरी तथा प्राप्त फसल आपस में बांट लेते थे।

दलितों के बच्चों की पढ़ाई का अच्छा प्रबंध नहीं था, हालांकि एक भाई ने एक स्कूल उनके लिए खोल रखा था। मकानों के लिए जगह की जरूरत थी। लेकिन मुख्य सवाल था जमीन का। उन्हें जमीन चाहिए थी। मजदूरी का कोई भरोसा नहीं था। मजदूरी न मिले तो भूखे भी रहना पड़ता। अगर उन्हें जमीन मिली तो उनकी भूख मिटने के साथ-साथ उन्हें इज्जत की जिन्दगी भी मिल सकती थी। गांव में कुल जमीन थी 2500 एकड़। दलित मजदूरों को सालभर में उपज का तीसवां हिस्सा मिलता था, और साथ में एक कंबल और एक जोड़ी जूता।

'जमीन कितनी चाहिए?'-विनोबा ने पूछा। थोड़ी देर आपस में विचार करने के बाद उनके मुखिया ने बताया-''80 एकड़ बहुत होगी-खुश्की वाली 40, तरी वाली 40।''

''इतने से काम निभ जायेगा?''- विनोबा ने पूछा।

''जी, हम लोग और काम भी कर लेते हैं।''-जवाब था।

''अगर जमीन दिलवा दी तो क्या सामुदायिक काश्त करेंगे?'' - विनोबा ने पूछा।

सामुदायिक खेती-कार्य की परंपरा तो थी ही, इसलिए यह शर्त मानने में दलितों को कोई दिक्कत नहीं हुई।

विनोबा ने उन्हें सरकार को अर्जी देने के लिए कहा और कहा कि वे इसके लिए कोशिश करेंगे। लेकिन देर तो हो ही सकती है, अगर जमीन उपलब्ध हो तो भी। सहजभाव से विनोबा ने गांव वालों से पूछा - ''यदि सरकार की ओर से जमीन न मिल सके, या देरी लगे, तो क्या उस हालत में गांव वालों की ओर से कुछ किया जा सकता है?''

विनोबाजी ने अपना विचार रखा ही था कि एक भाई रामचंद्र रेड्डी सहसा खड़े हो गये और नम्र भाव से कहा, 'मेरे स्वर्गीय पिताजी की इच्छा थी कि कुछ जमीन इन भाइयों को दी जाय। लिहाजा मैं अपनी और अपने पांच भाइयों की ओर से सौ एकड़ जमीन, जिसमें पचास खुश्की और पचास तरी वाली है, आपके द्वारा इन लोगों को भेंट करता हूं।'

''भूदान की गंगोत्री प्रकट हुई।''

ऐसा कुछ होगा, यह किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। कुछ क्षण सन्नाटा छा जाना स्वाभाविक था। सब लोग बैठे थे, और रामचंद्र रेड्डी खड़े थे। लोग उनकी ओर आश्चर्य से देखने लगे। विनोबा ने फिर दलितों की ओर मुखातिब होकर पूछा कि उन्हें कितनी जमीन चाहिए। उन्होंने अस्सी एकड़ की मांग ही दोहरायी। रामचंद्र रेड्डी की दान-घोषणा के बाद उनको एक कागज देकर अपना संकल्प लिखने के लिए कहा गया। शायद, जो घटित हुआ था, उसका विनोबा को भी सहसा विश्वास नहीं हुआ। वे खूंटा हिलाकर भरोसा मजबूत करना चाहते थे। रेड्डी ने तुरंत दान-पत्र लिखकर दिया। उस ऐतिहासिक दस्तावेज पर गवाह के तौर पर पोचमपल्ली के तीन लोगों ने और यात्री दल के साथ आये कोंडा व्यंकट रंगा रेड्डी ने दस्तखत किये। यह दानपत्र पुनः पढ़ा भी गया। रात को विनोबा ने कार्यकर्ताओं को तथा गांव के कुछ लोगों को बुलाया। जमीन के हस्तांतरण की ठीक से व्यवस्था और संबंधित कानूनी कार्रवाई का सवाल था। रामचंद्र रेड्डी ने इसके लिए 'सर्वोदय-सिद्धांतों के अनुरूप' एक ट्रस्ट गठित करने का दानपत्र में अनुरोध किया था। विनोबा ने इसे स्वीकार कर पांच लोगों का ट्रस्ट गठित किया, जिसमें रामचंद्र रेड्डी, गांव के पटेल, दलितों के दो प्रतिनिधि और प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष व्यंकट रंगा रेड्डी का समावेश था।

ये रामचंद्र रेड्डी कौन थे? उस इलाके के एक जाने-माने, पढ़े-लिखे सज्जन जमींदार थे। पहला भूदान देने का गौरव हासिल कर उन्होंने इतिहास में अपना नाम तो दर्ज किया ही, भूदान के मार्ग पर उनकी गहरी श्रद्धा भी बैठ गयी। पहला दान तो उन्होंने अपने स्वर्गीय पिताजी की इच्छा का सम्मान करते हुए दिया था, लेकिन बाद में भी उन्होंने आठ बार दान दिया। उनके पास आये किसी भूदान कार्यकर्ता को उन्होंने निराश नहीं किया। 1955 में दामोदरदास मूंदड़ा उनसे मिलने गये तब तक उन्होंने 400 एकड़ जमीन दान कर दी थी और उनके बड़े परिवार के लिए सिर्फ 70 एकड़ जमीन बची थी। उसमें भी 54 एकड़ खुश्क थी। मूंदड़ा ने ग्रामदान की बात रखी तो उन्होंने अपनी तैयारी बतायी।

पोचमपल्ली में घटित हुई घटना विलक्षण अवश्य थी, अकल्पित तो थी ही, लेकिन क्या वह विशिष्ट जगह, विशिष्ट पृष्ठभूमि पर और विशिष्ट परिस्थिति में घटित अकेली घटना थी या उसमें और भी कुछ गहरे संकेत थे? पहाड़ की चट्टानों से जब छोटा-सा झरना फूट निकलता है तो किसे कल्पना होती है कि यही झरना आगे जाकर बड़ी नदी का रूप लेने वाला है? कई झरने तो सूख भी जाते हैं। इतिहास को मोड़ देने वाली घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी भी शायद ही उन घटनाओं में प्रसुप्त संभावनाओं को ताड़ पाते होंगे। लेकिन क्रांतदर्शी प्रतिभा उनमें छिपे संकेतों को पहचानती है।

उस रात विनोबा को जल्दी नींद नहीं आयी। वे सोचने लगे कि इस घटना का अर्थ क्या है? क्या यह सिर्फ एक अकल्पित घटना है? या भूमि समस्या के समाधान का एक नया, अहिंसक तरीका हाथ आया है? क्या इससे अहिंसक समाज परिवर्तन का सूत्रपात हो सकता है? क्या इस सूत्र को पकड़कर भारत के देहातों को झकझोरा जा सकता है? विनोबा मुद्दत से ऐसे सूत्र की तलाश में थे। क्या इस घटना में सूत्र छिपा था? आज तक मूक रहे भूमिहीनों को जमीन मांगने की प्रेरणा हुई, उनकी तरफ से विनोबा को जमीन वालों से जमीन की मांग करने की प्रेरणा हुई और एक जमीन मालिक को जमीन देने की प्रेरणा हुई। इस प्रेरणा के पीछे विशिष्ट कारण थे। न होते तो जमीन मालिकों को जमीन देने की प्रेरणा होती? और वह भी इतने व्यापक पैमाने पर कि इस विशाल देश में जमीन के न्यायोचित पुनर्वितरण की दिशा में प्रभावी कदम उठ सके? क्या इस तरह कभी करोड़ों एकड़ जमीन का पुनर्वितरण हो सकता है? हिन्दुस्तान में भूमिहीनों की संख्या कम नहीं है। उनकी जमीन की भूख मिटाने के लिए पांच करोड़ एकड़ जमीन लगेगी। क्या इतनी जमीन मांगने से मिल सकेगी? और वह भी विनोबा को? अभी पूरे देश के देहातों में बिखरी जनता उन्हें जानती कहां थी? उनकी अकेले की शक्ति कितनी थी? उनके पास न कोई बड़ी संस्था या बड़ा संगठन था, न कोई सत्ता।

पोचमपल्ली के भूमिदान की बात फैल चुकी थी। आसपास के देहातों के लोग भी दूसरे पड़ाव तंगलपल्ली में जमा हुए। बीच के गांवों से ही नहीं, बल्कि खेतों से, जंगलों से जब यात्री दल गुजरा तब स्वागत के लिए, विनोबा के दर्शन के लिए कहीं कहीं तो दो सौ तक लोग खड़े थे। 19 अप्रैल की सुबह यात्रा भीमनपल्ली, धोतीगुड़ा, धर्माजीगुड़ा से गुजरी। इसी यात्रा-मार्ग पर किसी गांव में विनोबा को दूसरा भूदान मिला। 18 अप्रैल की घटना इतिहास में अंकित हुई और बार-बार उसका वर्णन दोहराया गया, लेकिन दूसरा भूदान जिस गांव में मिला, उसका नाम भी हमें पता नहीं है, यह आश्चर्य की बात है। दामोदरदास मूंदड़ा की 'भूदान-गंगोत्री' में इस घटना का जिक्र तक नहीं है। लेकिन खुद विनोबा ने कई बार उस घटना को याद किया है।

और इसके बाद विनोबा अपनी भूदान-यात्रा में जिस भी गांव पहुंचे, कोई फूलों की माला लेकर खड़ा मिला, तो बोले, बाबा को फूल नहीं मिट्टी चाहिए। किसी गांव में पहुंचे तो गांव वालों से पूछा, बाबा को खाने के लिए क्या दोगे? आवाज आयी - मिठाई। विनोबा बोले, लेकिन बाबा तो मिट्टी खाता है। इस तरह विनोबा घूम-घूमकर मिट्टी मांगते रहे और भारत की दानशीलता का सोता फूट पड़ा। गांधी के बाद गांधी के देश में अहिंसक क्रांति का यह चरम स्फोट था। विनोबा खुद चकित थे और दानवीर भारत के इस भूदान वैभव से दुनिया चमत्कृत थी। जिस दुनिया में जमीन के एक टुकड़े के लिए भाई भाई की जान का प्यासा हो जाता हो, उस दुनिया में एक संत की प्रेरणा ने इतने विशाल यज्ञ की नैतिक पूर्वपीठिका पर जो हस्ताक्षर किये, वे अमिट हो गये, दुनिया अचम्भित हो गयी और सबने खुली आंखों से देखा व महसूस किया कि आखिर गांधी क्यों कहकर गये—मैं अपनी कब्र से भी बोलूंगा...।

—*'सबै भूमि गोपाल की'* से कुछ संपादित अंश

आवरण-कथा

देख तेरे भूदान की हालत क्या हो गई बाबा!

❑ महादेव विद्रोही

देश के सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन का उत्थान तथा राजनीतिक व प्रशासनिक जीवन का पतन अगर कहीं एक साथ देखना हो तो भूदान आंदोलन की कसौटी पर पिछले 6-7 दशकों की परख की जा सकती है। एक तरफ विनोबा का आध्यात्मिक आभामंडल था, जिसके चुम्बकीय प्रभाव व आह्वान पर तत्कालीन भारतीय समाज ने अपनी जमींदारियां लुटा दी थीं। और दूसरी तरफ हमारी विकासवादी लोकतांत्रिक व्यवस्था है, जिसने विनोबा के नैतिक अधिष्ठान से उपजे उस यज्ञ के प्रसाद में भी घोटाले कर डाले। विडम्बना देखिये कि विनोबा का भूमिहीन भूमिहीन ही रह गया, और नव सामंतों ने नयी जमींदारियों के विधान रच डाले। सरकारों ने संत की अमानत में खयानत कर दी, अपने ही बनाये कानूनों को तोड़ डाला, कितनी ही भूदान समितियां भंग कर दीं, कितनी ही समितियों में गैरकानूनी ढंग से नियुक्तियां कर डालीं। जिस भूदान यज्ञ को घटते हुए दुनिया ने चमत्कृत आंखों से देखा, उसका परिणाम आज सरकारी मुलाजिमों के रहमोकरम पर उनकी फाइलों में किस प्रकार धूल फांक रहा है, आइए उसका एक विहंगम अवलोकन करें। –सं.

18 अप्रैल 1951 को पोचमपल्ली (तेलंगाना) में वी रामचंद्र रेड्डी के 100 एकड़ जमीन के दान के साथ भूदान की शुरुआत हुई। पोचमपल्ली के बाद 19 अप्रैल 1951 को तंगलपल्ली में विनोबाजी का दूसरा पड़ाव था। गांव के लोग फूल-मालाओं से विनोबाजी का स्वागत करने आये तो विनोबाजी ने उन्हें कहा—''मुझे फूल नहीं, मिट्टी दीजिए। मैं भूखा हूं, मुझे जमीन दीजिए।'' विनोबाजी के आह्वान पर व्यंकट रेड्डी एवं अन्य लोगों की ओर से 90 एकड़ जमीन प्राप्त हुई। शाम की सभा में विनोबाजी ने कहा, ''हर व्यक्ति के पास जो कुछ है, उसे दान करना चाहिए। यही गीता का संदेश है। तेलंगाना में 51 दिनों में 200 गांवों में विनोबाजी को 12,201 एकड़ जमीन प्राप्त हुई। 13 वर्षों की भूदान पदयात्रा तथा 5 वर्षों की तूफान यात्रा में 47,63,636 एकड़ जमीन प्राप्त हुई। यह एक अद्‌भुत एवं सौम्य क्रांति थी।

भूदान प्राप्ति के बाद उसके वितरण के लिए कानून की आवश्यकता थी अतः विभिन्न राज्यों में भूदान यज्ञ अधिनियम बने। इसके अनुसार विनोबा जी या उनके द्वारा मनोनीत व्यक्ति की सलाह से भूदान बोर्डों के गठन का प्रावधान बना। इसके द्वारा भूदान का वितरण शुरू हुआ। भूदान के आरंभ के पहले दशक

में ही इसमें भ्रष्टाचार भी शुरू हो गया। 1962 में भारत सरकार के तत्कालीन गृहमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने बरनपुर (उत्तर प्रदेश) में धीरेन्द्र मजूमदार की उपस्थिति में कहा, ''मेरी जितनी जानकारी है, उससे साफ है कि जमीन बांटने में बहुत ज्यादा भ्रष्टाचार हुआ है। अगर आपलोग इसे नहीं सुधारते, तो सर्वोदय समाज बदनाम होगा।'' तूफान यात्रा के दौरान 6 सितंबर 1965 को भूदान के भ्रष्टाचार की शिकायत विनोबा जी के पास आयी तो उन्होंने कहा- ''और किसी को मैं क्या दोष दूं! दोष मेरा ही है, क्योंकि मैंने ही भावना में आकर एक कल्पना कर ली थी कि क्रांतिकारक कार्यकर्ता होंगे, उनके द्वारा जमीन बंटेगी तो उसका परिणाम मालिकी-विसर्जन के रूप में सामने आयेगा। लेकिन अनुभव दूसरा आया। यह कलियुग है। विकारों का असर है ही मन पर। इसलिए मैं इसे अपना ही दोष मानता हूं।''

अप्रैल 1964 में सुरेशराम भाई ने 'भूदान यज्ञ' में लिखा - ''लोगों ने विनोबा जी की वजह से या भूदान की नैतिक भूमिका के कारण अपना विरोध नहीं प्रकट किया, लेकिन उनके दिल में यह चीज बैठ गयी है कि भूदान के कार्यकर्ता का स्तर दूसरे सामाजिक या पार्टी वाले कार्यकर्ता से कोई खास ऊंचा नहीं है। कुछ ऐसे लोग जरूर हैं जिनका नैतिक मान बहुत ऊंचा है और जिन्होंने ईमानदारी के साथ काम किया है। उन्हीं की वजह से हम सब की लाज ढंकी हुई है। लेकिन आम कार्यकर्ता आज देहात में श्रद्धा और आकर्षण का केन्द्र नहीं रह गया है।''

भूदान भूमिहीनों के लिए

1968 में कानपुर के एक व्यापारी ने किसी तरह भूदान की जमीन प्राप्त कर ली पर डिप्टी कलक्टर ने यह कहकर उनके नाम दाखिल खारिज करने से इंकार कर दिया कि वे उस गांव के नहीं हैं और वे भूमिहीन की श्रेणी में नहीं आते हैं। व्यापारी ने डिप्टी कलक्टर के फैसले को इलाहाबाद उच्च न्यायालय में चुनौती दी। उच्च न्यायालय ने उनके पक्ष में फैसला दिया। उत्तर प्रदेश भूदान यज्ञ समिति ने इसके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। इस पर सुनवाई के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने अपना ऐतिहासिक फैसला दिया। (अगले पृष्ठ पर बॉक्स में)

बिहार सरकार ने भूदान मामलों की

Judgement of Supreme Court

"In view of the scheme of Bhoodan Yajna movement which Acharya Vinoba Bhave and later Jaya Prakash Narayan carried out and the purpose of the movement clearly indicated that when in Sec.14 allotment was contemplated in favour of landless persons, it only meant those landless persons whose main source of livelihood was agriculture and who were agriculturists residing in the village where the land is situated and who has no land in their name at that time. It never meant that all those rich persons who are residing in the cities and have properties in their possession but who are technically landless persons as they did not have any agricultural land in their name in the tehsil or the village where the land was situated or acquired by the Bhoodan Samiti that it could be allotted in their favour. This was not the purpose or the philosophy of Bhoodan Yajna. Bhoodan Yajna scheme only contemplated allotment of lands in favour of those landless agricultural labourers who were residing in the village concerned and whose source of livelihood was agriculture. The fundamental principle of the Bhoodan Yajna movement is that all children of the soil have an equal right over the Mother Earth, in the same way as those born of a mother have over her. It is, therefore, essential that the entire land of the country should be equitably redistributed anew, providing roughly at least five acres of dry land or one acre of wet land to every family."

(सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का हिन्दी भावानुवाद)

आचार्य विनोबा और जयप्रकाश नारायण द्वारा चलाये गये भूदान आंदोलन का स्पष्ट उद्देश्य था कि भूदान में प्राप्त जमीनें केवल भूमिहीनों में बांटी जायेगी। इसका मतलब बिल्कुल साफ है कि केवल उन्हीं भूमिहीनों को, जिनकी मुख्य आजीविका खेती है, वे उसी गांव के बाशिन्दे होने चाहिए, जहां वह जमीन स्थित है और उनके नाम पर पहले से कोई जमीन नहीं होनी चाहिए। इसका अर्थ है कि जो लोग शहरों में रह रहे हैं, जिनके पास अपनी सम्पत्ति है और केवल तकनीकी रूप से जो भूमिहीन हैं अर्थात जहां पर जमीन स्थित है उस गांव या तहसील में उनके नाम जमीन नहीं है, ऐसे लोगों की भूदान की जमीन नहीं दी जा सकती, क्योंकि ऐसा करना भूदान का उद्देश्य नहीं है और भूदान का दर्शन इसकी इजाजत नहीं देता। भूदान आंदोलन का बुनियादी सिद्धांत है कि धरती पर रहने वाले सभी का धरती पर समान अधिकार है। ठीक वैसे ही जैसे किसी मां के सभी बच्चों का अपनी मां पर समान अधिकार होता है। इसके अनुसार जरूरी है कि देश की सारी जमीन यहां रहने वाले लोगों के बीच बराबरी से इस प्रकार बांटी जानी चाहिए कि हर परिवार को कम से कम 5 एकड़ सूखी और एक एकड़ नम भूमि मिल सके।

जांच के लिए देवव्रत बंद्योपाध्याय की अध्यक्षता में एक आयोग गठित किया था। इस आयोग ने 16 जून 2006 को अपनी अंतरिम रिपोर्ट में कहा है—''सार्वजनिक एवं अन्य' के नाम पर 59 संस्थाओं को 11,130 एकड़ से अधिक जमीन दे दी गयी है, जिसका वे अपनी-अपनी सम्पत्ति के रूप में उपभोग कर रहे हैं।'' इस हिसाब से देखें तो औसतन हर एक संस्था के नाम 189 एकड़ जमीन का आवंटन किया गया है।

भूदान-ग्रामदान सजा बन गया

पिछले दिनों भारत सरकार ने 'किसान सम्मान निधि' के नाम से एक योजना शुरू की है, जिसके अंतर्गत छोटे किसानों को 6 हजार रुपये वार्षिक सहायता दी जायेगी। राजस्थान एवं बिहार से समाचार आये हैं कि ग्रामदानी गांवों के किसानों तथा भूदान किसानों को इस योजना से वंचित कर दिया गया है क्योंकि इन राज्यों की जमीन किसानों के नाम पर नहीं है। इसी तरह केरल से समाचार है कि भूदान किसानों को इस जमीन पर गृह ऋण नहीं मिल रहा है। ग्रामदान कानून की विशेषता है कि इसमें सम्पत्ति ग्रामसभा में निहित होती है। उसी तरह भूदान की जमीनों की मालकियत भूदान बोर्ड/समिति की होती है। जिन्हें जमीन दी जाती है उनका नाम कब्जेदार के रूप में रहता है। पता नहीं सरकारी अमलदारों को इसकी जानकारी है या नहीं।

केन्द्र एवं राज्य सरकारों से मेरी अपील है कि अपने प्रावधान में संशोधन करें और उक्त योजना का लाभ ग्रामदानी गांवों के किसानों तथा भूदान किसानों को प्राप्त हो, ऐसे प्रावधान करें। कई राज्यों में वन विभाग भूदान की जमीन को अपनी बता रहा है और वहां से भूदान किसानों को भगाया जा रहा है। इन समस्याओं के निराकरण की जिम्मेवारी राज्य सरकारों की है। इतना ही नहीं, जिस तेलंगाना से भूदान गंगोत्री शुरू हुई थी, वहां से आने वाली खबरें और भी भयावह हैं। तेलंगाना में भूदान की लगभग 3500 एकड़

जमीन प्रशासन और प्रभावशाली दबंगों के बीच घोटाले का शिकार हो चुकी है। उनका पता ही नहीं चल रहा है कि अब वे जमीनें हैं कहां। इसी तरह गुजरात में भी भूदान की सैकड़ों एकड़ जमीन का घोटाला हुआ है, ऐसी खबरें मिल रही हैं। भूदान ऐक्ट के नियमों के मुताबिक हर राज्य में गठित की गयी भूदान समितियों की अध्यक्षता के लिए स्वयं विनोबा द्वारा नामित व्यक्ति की सलाह से नियुक्ति किये जाने का प्रावधान था। बाद में विनोबा ने यह अधिकार सर्व सेवा संघ को सौंप दिया। उसके बाद से भूदान समितियों की अध्यक्षता के लिए सर्व सेवा संघ अपने प्रतिनिधि नामित करता रहा है।

अभी हाल यह है कि कई राज्यों में कानून के इस प्रावधान की खिल्ली उड़ायी जा रही है। सरकार ने उन राज्यों में सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि के बजाय सरकारी अधिकारियों को अपने-अपने राज्यों की भूदान समितियों का अध्यक्ष बना रखा है। यह कानून का मजाक तो है ही, भूदान यज्ञ की नैतिक आधारभूमि के साथ खुलेआम की जाने वाली अमानत में सरकारी खयानत का नायाब उदाहरण भी है। मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, पंजाब और कर्नाटक आदि राज्यों में तो भूदान ऐक्ट ही खत्म कर दिया गया है। सरकारें इस सवाल पर मुंह चुरा रही हैं कि इन राज्यों में मिली लाखों एकड़ भूदान की जमीन का हुआ क्या और उन जमीनों पर सरकारें कौन-सा खेल खेल रही हैं।

बिहार भूदान जांच आयोग

बिहार से आने वाली खबरें बताती हैं कि झूलन बैठा की याचिका के आधार पर पटना उच्च न्यायालय ने बिहार सरकार को भूदान से संबंधित भ्रष्टाचार की पिछले दस वर्षों की शिकायतों की जांच के लिए आयोग गठित करने का निर्देश दिया है, तदनुसार बिहार सरकार ने चार सदस्यीय जांच आयोग गठित किया है एवं बिहार भूदान समिति के अध्यक्ष को हटा दिया गया है। यहां भी भूदान समिति की अध्यक्षता सरकारी प्रतिनिधि कर रहा है, जो भूदान ऐक्ट का उल्लंघन है। बिहार सरकार द्वारा गठित जांच आयोग को 22 महीनों में अपनी दिपोर्ट देने का निर्देश दिया गया है। बिहार में भूदान लाभार्थियों से मैं आग्रह करना चाहूंगा कि वे इस आयोग के सामने उपस्थित होकर अपनी जमीन के संबंध में हुई अनियमितताओं से आयोग को अवगत करायें ताकि उनका वाजिब हक उन्हें मिल सके। ❑

भूदान-ग्रामदान की अद्यतन ज्ञात स्थिति

राज्य	दान जमीन	वितरित जमीन (एकड़)	पंजीकृत ग्रामदान (एकड़)
आंध्र प्रदेश	252,119	108,770	1
असम	877	877	312
बिहार	648,593	253,833	1583
दिल्ली	300	180	-
गुजरात	103,350	50,984	-
हरियाणा	2,070	2,043	-
हिमाचल प्रदेश	5,240	2,531	-
जम्मू-कश्मीर	211	5	-
झारखंड	1469,280	488,735	-
कर्नाटक	15,864	5,017	-
केरल	26,293	5,774	-
मध्य प्रदेश	410,151	237,629	-
महाराष्ट्र	158,160	113,230	19
उड़ीसा	638,706	579,984	1270
पंजाब	5,168	1,026	-
राजस्थान	546,965	142,699	205
तमिलनाडु	27,677	22,837	537
उत्तर प्रदेश	436,362	418,958	5
प. बंगाल	16,000	9,000	-
भारत	**4763,566**	**2444,112**	**3932**
बांगला देश	110	110	
कुल	**4763,676**	**24,44,222**	**3932**

सर्वोदय जगत को पत्र लिखें!

सर्वोदय जगत में आप क्या पढ़ना चाहते हैं—अपने पाठकों से हमारा आग्रह है कि इस विषय पर अपने सुविचारित सुझाव हमें पत्र लिखकर भेजें। देश, काल, समाज, परिस्थितियां और वे तमाम वैश्विक हलचलें, जो आपको उद्वेलित करती हैं, आपको चिन्तन के लिए प्रेरित करती हैं, उन सभी विषयों पर अपनी राय, अपने सवाल, अपने सुझाव तथा आपके अपने पत्र सर्वोदय जगत से आपकी अपेक्षाएं, हर अंक पर आपकी पाठकीय प्रतिक्रियाएं सर्वोदय जगत के हर अंक में प्रकाशित होने वाले संपादकीय पते पर निरंतर भेजें। आपका यह सहयोग हमारे लिए अत्यंत मूल्यवान है। आपके विचार सर्वोदय जगत को समृद्ध करेंगे। पत्र का अपने पाठक से और पाठक का अपने पत्र से संवाद और संवाद की निरंतरता पत्र को बेहतर बनायेगी। तो उठाइये कलम और लिख भेजिए कि इस अंक को पढ़ने के बाद, इसकी बेहतरी के लिए आपके मन में क्या विचार आया है। और किन विषयों पर विमर्श की अपेक्षा है आपकी। आपके पत्र सर्वोदय जगत में प्रकाशित करके हमें खुशी होगी। **–सं.**

वर्तमान के संदर्भ में भूदान

❑ गौरांग महापात्र

भूदान आंदोलन केवल एक आंदोलन नहीं था। उसे हम यज्ञ कहते हैं। दुनिया के किसी भी देश में चले जाइये, उन सबका अपना-अपना संविधान है, जिसमें लिखे हुए विधानों के मुताबिक उन देशों की व्यवस्थाएं संचालित होती हैं। कानून की इन सभी किताबों में हर मनुष्य को जीवन जीने का अधिकार मिला हुआ है। भूमि का प्रश्न मनुष्य की जीने के अधिकार से जुड़ा प्रश्न है। दुनिया में जितना भी भूमि संसाधन मौजूद है, उसका दुनिया की आबादी में बंटवारा असमान है। किसी के पास जरूरत से ज्यादा है तो किसी के पास जरूरत से कम है, वहीं किसी के पास बिल्कुल भी नहीं है। विनोबा द्वारा शुरू किये गये भूदान आंदोलन को इसी संदर्भ में समझे जाने की जरूरत है। भूदान आंदोलन वस्तुतः भारत की भूमि समस्या को गांधी दर्शन के आलोक में अहिंसा तथा हृदय परिवर्तन के माध्यम से हल किये जाने का एक प्रयत्न था।

कहते हैं कि भूदान में बहुत सारी अनुपयोगी भूमि भी प्राप्त हुई। इसमें पथरीली और ऊसर भूमि भी थी। विनोबा कहा करते थे कि भूमि की गुणवत्ता पर ध्यान देने के बजाय इस बात पर ध्यान देने की जरूरत है कि समाज परिवर्तन के लिहाज से लोगों ने अपनी सम्पत्ति दान तो की। हृदय परिवर्तन की एक प्रक्रिया तो शुरू हुई। यही इस शक्तिशाली क्रांति का मूल था। जिन लोगों ने आजादी की लड़ाई लड़ी, वही जुझारू कार्यकर्ता जब भूदान के यज्ञ में लगे तो गांधी द्वारा प्रतिपादित सर्वोदय विचार का, विनोबा प्रेरित भूदान के विचार में विलय हो गया। सर्वोदय के कार्यकर्ता गांवों की ओर चल पड़े। स्थानीय समाज समाज परिवर्तन के इस अनूठे यज्ञ की धुरी बन गये।

गांधी का ट्रस्टीशिप का सिद्धांत समर्पण का बेमिसाल सिद्धांत था। उनकी दुर्भाग्यपूर्ण हत्या के बाद बड़ी संख्या में उनके अनुयायियों ने जब राजनीति में शरण खोज ली तब बेसिक शिक्षा, खादी, ग्रामोद्योग और ट्रस्टीशिप जैसे मौलिक कार्यक्रम व सिद्धांत नेपथ्य में चले गये। स्वतंत्र भारत में निचले स्तर पर जीवन यापन कर रही जनता कहीं पीछे छूटने लगी। एक आत्मनिर्भर स्वतंत्र भारतीय समाज का गांधीजी का सपना अनदेखा होने लगा। सामाजिक स्तर पर एक दूसरे के साथ अपनी भावनाओं और संपत्ति की साझेदारी की गांधीजी की परिकल्पना पर धूल पड़ गयी। ट्रस्टीशिप के सिद्धांत को खत्म करने के लिए एक चालाक प्रक्रिया की शुरुआत हो गयी।

लेकिन विनोबा गांधीजी के वास्तविक उत्तराधिकारी थे। उन्होंने नयी नयी मिली आजादी के जश्न में पीछे छूट रहे गांधीजी के सपनों में जान डालने की कोशिश शुरू की और समाज में एक दूसरे के साथ शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की जरूरतों को रेखांकित किया। एक छोटे से गांव से शुरू हुई भूदान की यात्रा धीरे-धीरे ग्रामदान की ओर बढ़ी। इस रास्ते में सम्पत्तिदान, श्रमदान, और जीवनदान के अनेक पड़ाव आये। होते-होते यह यात्रा प्रदेशदान तक पहुंची। जयप्रकाश नारायण ने भूदान यज्ञ की आत्मा को महसूस किया और इस राह में फिर अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया। बाद में इस आंदोलन को यूरोपियन और पश्चिमी विद्वानों, पत्रकारों और दार्शनिकों का भी समर्थन मिला। लुइस फिशर, हैलम टेनीसन, अल्फर्ड टेनीसन, चेस्टर बावेल्स, अर्नेस्ट बार्डर और आर्थर कोस्टलर जैसे विद्वानों, लेखकों और उद्योगपतियों ने अपने विचार लिखे और दुनिया को समझाया कि इस आंदोलन की आत्मा इतनी शक्तिशाली है कि इसके जरिये दुनिया में जीव जगत की सबसे मौलिक समस्या भूख का समाधान संभव है।

लगभग 68 साल पहले सोचे और अमल में लाये गये इस आंदोलन के जरिये जो व्यापक उद्देश्य साधने की कोशिश की गयी थी, आज इक्कीसवीं सदी में भी उसके महत्त्व और परिणाम की प्रासंगिकता पुरानी नहीं पड़ी है। गांधी, विनोबा और जयप्रकाश की त्रयी के चिन्तन की वह धारा हमारे वर्तमान के अधुनातन संदर्भों में भी उसी ताकत के साथ काम कर रही है।

(छात्र-छात्राओं से हुई बातचीत के आधार पर निकाले हुए निष्कर्षों का संपादित अंश) ❑

भूदान

मैं मिट्टी पाने आया रे भाई,
मैं मिट्टी पाने आया।
जो कुछ तेरे पास नहीं है
देने दिलाने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

जेहिं विधि तू माटी से खेला,
जीवन तेरा हो गया मैला।
इस माटी से कैसे खेलें,
तुमको दिखाने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

इस माटी का नाम है धरती
जीवन को जो पावन करती।
इस माटी का आज तुम्हें मैं,
मूल्य बताने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

मां को तुमने दासी माना,
कृतघ्न होकर मर्म न जाना।
उस माता का फर्ज मैं तुमको
याद दिलाने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

स्वारथ में तू बन गया अंधा
मोह का डाल गले में फंदा।
दोजख की इस जलती आग से,
तुमको बचाने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

सोने ने तुमको ललचाया,
लोभ ने तेरा मन भरमाया।
ये ही सोना दुख सागर में,
तुमको डुबाने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

अब भी मेरा कहना मानो,
अपना पराया हक पहचानो।
इस हक की नैया लेकर मैं,
तुमको तराने आया रे भाई।।
मैं मिट्टी...

–दुखायल

चिन्तन

सत्ता का चरित्र बदले बिना सेवा की अपेक्षा व्यर्थ है

❑ अव्यक्त

विनोबा ने संस्थाओं के दो रूप बताए थे- 'सेवा-संस्था' और 'सत्ता-संस्था'। उन्होंने राजनीतिक दलों को 'सत्ता-संस्था' बताया था। ऐसी सत्ता-संस्था जो आखिरकार सेवाकार्य से पूरी तरह विरत हो जाती है। विनोबा के शब्द थे- 'मैंने दो शब्द बनाये हैं- एक है 'सत्ता-संस्था' दूसरी है 'सेवा-संस्था'। मेरा कहना यह है कि सारी सत्ता-संस्थाओं को सेवा-संस्थाओं में बदल जाना चाहिए। यद्यपि सत्तावाले भी सेवा का दावा करते हैं, तथापि उनकी सेवा पर सत्ता का रंग है। इसलिए उनके द्वारा जो सेवा होती है, उससे लोकशक्ति नहीं बढ़ सकती।आज सारा लोकजीवन ऊपर से, केंद्र से नियंत्रित है। इसलिए सभी लोग वहाँ की सत्ता हाथ में लेना चाहते हैं। वहाँ राजनीतिक पक्ष बन गये हैं और वे फिर झगड़े के अखाड़े बन जाते हैं। आज वही सत्ता का स्थान है। पंचायती राज के रूप में भी वही सत्ता नीचे तक विकेंद्रित कर दी गयी है।'

इसलिए इस बात को पहचानना ज़रूरी है कि जैसे ही सेवाकार्य पर सत्ता का रंग चढ़ता है वह अहंकार, द्वेष, मत्सर और रजोगुणी भोगवृत्ति को बढ़ाने लगता है। सेवाकार्य कहीं पीछे छूट जाता है और सत्ता हासिल करके उसपर सदा के लिए काबिज रहने की जुगत शुरू हो जाती है। उसके लिए सारे तिकड़म किए जाते हैं। नैतिक और अनैतिक सभी प्रकार के साधनों का इस्तेमाल होने लगता है। राजनीति की भाषा और शैली युद्ध की भाषा और शैली बनने लगती है। समाज में एकजुटता के बजाय अंतहीन विखंडन की प्रक्रिया चल पड़ती है। और सबसे महत्वपूर्ण यह कि इससे लोकशक्ति का निर्माण नहीं हो पाता।

लोकसाधना के अपने अनुभवों से विनोबा ने इसे गहराई से जाना था। अपने प्रसिद्ध लेख 'सुशासन और दुःशासन' में विनोबा ने लिखा-'हम सोचते हैं कि हम दुनिया में सुशासन स्थापत करेंगे— यह भ्रम है। या तो शासनमुक्ति होगी या दुःशासन चलेगा। प्रयत्न होगा सुशासन का, लेकिन आएगा दुःशासन ही। फिर वह किसी भी देश में हो। अनुभव यही आएगा कि शासन के मार्फत हम जो भी आयोजन करते हैं—अच्छा हो यही सोचकर करते हैं। लेकिन उसमें से समस्याएं निकलती हैं। परस्पर द्वेष बढ़ता है। हिंसा उत्पन्न होती है। जिसे आप सुशासन कहते हैं, वह शस्त्रारूढ़ है (लाठी-हथियार या पुलिस और लश्कर के बूते चल रही है), इसीलिए मैं उससे डरता हूं। शासन देखते ही देखते दुःशासन हो जाता है। लोकतंत्र का आधार यदि लश्कर रहा तो उसका रूपांतर लश्करशाही में होने में कितनी देर लगेगी? ऐसी अवस्था में यदि हम शासन पर ही निर्भर रहेंगे, तो शासन का रूपांतर एक क्षण में कुशासन में, दुःशासन में हो सकता है। और फिर सुशासन हो, तो भी वह सुशासन नहीं है। उसमें हम सब यंत्र की तरह जड़ बन जाते हैं। जिस शासन में मनुष्य की बुद्धिमत्ता का विकास नहीं होता, आत्मबुद्धि नहीं जागती, स्वयंबुद्धि, स्वयंप्रज्ञा का जिसमें उदय नहीं होता, वह योजना भले ही सुखदायी हो, तो भी विकास की दृष्टि से वह उपयोगी नहीं है। और इसलिए उसे सर्वोत्तम व्यवस्था नहीं कह सकते।'

तो राजनीतिक पार्टियों द्वारा चलाई जानेवाली व्यवस्था लोगों में आत्मबुद्धि और आत्मशक्ति पैदा ही नहीं होने देती। वास्तव में पार्टियों और इनके कार्यकर्ताओं में ही वह स्वयंप्रज्ञा जाग नहीं पाती। बल्कि पार्टियाँ आपस में इतनी द्वेषपूर्ण और कपटपूर्ण प्रतियोगिताओं में शामिल हो जाती हैं कि समूचा सामाजिक वातावरण ही दूषित होने लगता है।

राजनीतिक दल लोकतंत्र का स्वांग रचते हैं। सबकुछ करते हैं जनता के ही नाम पर, लेकिन वास्तव में करते हैं अपनी मनमानी। विनोबा लिखते हैं- 'आज प्रजा के हाथ में कुछ नहीं होता। उससे मत (वोट) लेने का नाटक किया जाता है। फिर उसके परिणामस्वरूप राज्य चलानेवाले कहते हैं कि हम जो कुछ करते हैं, वह प्रजा की सम्मति से ही करते हैं।पुराने राजा ऐसा नहीं कह सकते थे कि हम जो करते हैं, वह प्रजा की सम्मति से करते हैं। आजकल तो कई जगह सरकार की ओर से गोली चलाई जाती है, तो कहा जाता है कि हम लोगों की सम्मति से गोली चलाते हैं।लोगों ने हमें राज्य चलाने की अनुमति दी है, इसलिए हमें ऐसा करना पड़ता है। पुराने राजाओं के सरदार ऐसा नहीं कह सकते थे कि हमने गोली चलाई, तो लोगों की सम्मति से चलाई। इसलिए वे जो पुण्य-पाप करते थे, वह राजा का पुण्य-पाप होता था और उसका बोझ उसी को उठाना पड़ता था। लेकिन आज के राजा जो पुण्य-पाप करते हैं, उसकी जिम्मेवारी आप पर है, जनता पर है।'

चुनाव और घोषणापत्र (मैनीफेस्टो) हास्यास्पद होने के स्तर तक पहुँच चुके हैं। जनता इसे शुरू से ही झूठ मानकर चलने को अभिशप्त है। चुनावों में आत्मस्तुति, परनिन्दा और मिथ्या भाषण का इस कदर बोलबाला है कि भले लोग इस दौड़ में शामिल ही नहीं होना चाहते। विनोबा ने इस बारे में लिखा है-

'समझ लेना चाहिए कि आज की चुनाव-पद्धति ही ऐसी है, जिसमें सामान्य अक्लवाले ही चुने जाएंगे। उसमें सर्वोत्तम लोग नहीं चुने जा सकते।सज्जन लोग बेतहाशा पैसा खर्च नहीं कर सकते। वे अपनी प्रशंसा और दूसरों की निन्दा भी नहीं कर सकते। और इसके बिना उन्हें वोट मिल नहीं सकते। चुनाव में ये तीनों बातें करनी पड़ती हैं।'

तो फिर रास्ता क्या है? क्या राजनीति पूरी तरह सज्जनता और शिष्टता से विहीन हो जाएगी? विनोबा कहते हैं कि राजनीति में अशिष्टों का बोलबाला तभी घटेगा जब शिष्ट लोग ज्यादा मात्रा में इसमें शामिल होंगे। लेकिन विशिष्ट लोग इसमें शामिल न होकर बाहर से इसपर नियंत्रण रखेंगे तो ज्यादा कारगर होगा। विनोबा के शब्द हैं-'सज्जनों को राजनीति से अलग नहीं रहना चाहिए। सज्जनों के दो वर्ग हैं- शिष्ट और विशिष्ट। तीसरा वर्ग है अशिष्ट, असज्जन। शिष्ट और सज्जनों को

राजनीति में आना चाहिए और विशिष्ट लोगों को अलग रहना चाहिए। विशिष्ट अलग न रहें और वे भी अगर शिष्टों में शामिल हो जाएं, तो फिर कंट्रोल करनेवाला कोई नहीं रहेगा। राजनीति चलाना एक बात है और राजनीति को काबू में रखना दूसरी बात है। विशिष्ट जनों के हाथ में अंकुश रहना चाहिए। वे भी राजनीति में पड़ेंगे तो निर्णयात्मक नियंत्रण की शक्ति नहीं रहेगी। शासक पक्ष और विरोधी पक्ष दोनों भूल करेंगे तो काबू कौन रखेगा?

कई बार विनोबा के दलविरोधी विचारों की वजह से उनके लोकतंत्र और राजनीति विषयक विचारों को समझने में कठिनाई होती है। लेकिन इसका कारण है कि हम स्वयं ही दलगत राजनीति के बाहर कुछ सोच पाने में असमर्थ होते हैं। दिनोंदिन हमारा समस्त चिंतन और जीवन दलगत परिधि में घिरता जा रहा है। दलगत भावना इस तरह हमारे जीवन के सभी पक्षों पर हावी होती जा रही है कि निजी और पारिवारिक संबंध तक इसकी भेंट चढ़ने लगे हैं। राजनेता अपने तात्कालिक हितों के हिसाब से जोड़-तोड़ करते रहते हैं, लेकिन हम हैं कि दलगत भावना का इस कदर शिकार हो जाते हैं कि वर्षों के मित्रवत संबंध खो बैठते हैं। इसलिए विनोबा ने कहा पार्टीवाली सियासत से जनता की खिदमत नहीं हो सकती।

पूछा जा सकता है कि एक प्रातिनिधिक लोकतंत्र का विकल्प ही क्या है? या इसके बुनियादी मॉडल में किस तरह से सुधार लाया जा सकता है? विनोबा कहते हैं कि इसका उपचार तो सामाजिक और आध्यात्मिक स्तर पर ही संभव है। जब तक संबंधित मनुष्यों में स्वयंप्रज्ञा नहीं जागेगी, तब तक शासित और शासक दोनों ही अंधेरे में विचरण करते रहेंगे। लेकिन यह आध्यात्मिक चेतना समाज में लाएगा कौन? क्या धर्मसंस्था और इसके मठाधीश इसका नेतृत्व करेंगे? विनोबा इस बारे में स्पष्ट थे। यह आध्यात्मिक चेतना निज साधना से ही संभव है। पंथ और ग्रंथ प्राथमिक स्तर तक सहायक हो सकते हैं। लेकिन असल स्वयंप्रज्ञा तो निर्ग्रंथ होकर ही पाई जा सकेगी। इस कार्य को भी यदि हमने ठेकेदारों के हाथों में दे दिया तो फायदे की जगह नुकसान ही होगा। विनोबा कहते हैं-

'धर्म और समाजसेवा, ये जीवन के सबसे बड़े दो काम हमने अपने प्रतिनिधियों पर छोड़ दिए हैं। एक को दक्षिणा के रूप में और दूसरे को टैक्स के रूप में पैसा दे देते हैं। सोचना चाहिए कि जीवन की सबसे बड़ी दो बातें दूसरों पर सौंपकर हम लोग मनुष्य जीवन प्राप्त करके भी योजनापूर्वक पशु-जीवन ही जी रहे हैं।सरकार अस्पताल खोल सकती है, लेकिन उसमें प्रेमपूर्वक सेवा करना नहीं सिखा सकती। सरकार कॉलेज खोल सकती है, लेकिन ज्ञान-लालसा, निरंतर अध्ययनशीलता का निर्माण नहीं कर सकती। जनता में गुण-वर्धन करना सरकार का काम नहीं, और गुण-वर्धन होगा, तभी देश वर्धित होगा। गुण-वर्धन करना सर्वथा जनता का काम है। जनता को निज-कर्तव्य का भान होना चाहिए।'

आज तो ऐसी व्यवस्था बन रही है कि जनता ने खुद अपना सबकुछ सरकारों के हाथ में दे दिया है। राज्य-सत्ता के हाथों में हद से ज्यादा शक्ति है। लोक निःशक्त होता गया है और तंत्र हावी होता गया है। जनता युद्ध और संघर्ष न भी चाहे, फिर भी कोई शासनकर्ता अपनी सनक में या अपने राजनीतिक हित के लिए देश और दुनिया पर युद्ध थोप सकता है। ऐसे में हम क्या करें। विनोबा कहते हैं-

'हम उनसे कहें कि तुमने हजार साल से व्यवस्था के कई प्रयोग किए। हमें कोई सुख नहीं हुआ। आपकी व्यवस्था में कई उलटफेर हुए। एक में से दूसरी व्यवस्था कायम की गई। कई क्रांतियां हुईं, लड़ाइयां हुईं। लोगों का व्यर्थ संहार हुआ। आपने बहुत प्रयोग कर लिए। अब बस कीजिए। ज्यादा से ज्यादा अव्यवस्था और पीड़ा व्यवस्थापक वर्ग ने ही दी है। अब मेहरबानी करके हट जाइए, तो हमें ज्यादा शक्ति आएगी, दुख मिट जाएगा और सुख होगा। दुनिया में व्यवस्थापकों का तांता सा लगा रहता है। वह जनता के गले में फंदे के समान प्राणघातक हो रहा है। सारी दुनिया के व्यवस्थापक यदि अपनी-अपनी जगह से हट जाएं, तो दुनिया में शांति होगी और मानवता का कल्याण होगा।वास्तव में शांति तब तक कायम नहीं हो सकती, जब तक केंद्रित शासन कायम है। देश में शांति रखने या उसे अशांति में डुबोने की ताकत केंद्रित शासन में रहती है और लोग वैसे के वैसे मूर्ख रह जाते हैं। फिर उनके नेता दावा करते हैं कि हमने जो किया उसे जनता का समर्थन प्राप्त है।'

आज दिनोंदिन हमें इस बात का अधिक से अधिक एहसास होता जा रहा है कि तमाम हथकंडों को अपनाकर राजनीतिक दल रूपी सत्ता-संस्थाएँ जब शासन पर काबिज हो जाती हैं तो उनके पीछे महज 30 प्रतिशत लोगों का मत या वोट रूपी समर्थन होता है। यानी हर प्रकार के छल-बल-कल का इस्तेमाल करके महज 30 फीसद लोगों का विश्वास जीतकर येन-केन-प्रकारेण सत्ता पर काबिज होना ही उद्देश्य रह गया है। क्या विडंबना है कि राजनेताओं का समूह अभी भी देश की आम जनता को भावुक और मूढ़ समझते हुए उन्हें तरह-तरह के प्रपंचों से फुसलाता है। झूठे वादे, अतिशयोक्तिपूर्ण घोषणाएँ, भ्रामक लोभ-लाभ और जाति से लेकर सांप्रदायिक विद्वेष तक का इस्तेमाल आम प्रचलन में आ गया है। ये सब स्वीकृत और स्थापित तरीके बनते जा रहे हैं। धनबल और बाहुबल का प्रकटरूप में दुरुपयोग किया जा रहा है और अब यह सर्वस्वीकार्यता के स्तर को छू रहा है। छलपूर्वक भय और असुरक्षा का वातावरण तैयार कर दिया जाता है। विचार की जगह जीवित व्यक्तियों को पूजा की सामग्री बनाया जा रहा है। सत्तासीनों से प्रश्न पूछने के मंच और अवसर नगण्य हो गए हैं। इसलिए सत्ता का मूल चरित्र ही अलोकतांत्रिक हो गया है। इसलिए विनोबा ने कहा-

'हम राजनीति के महत्व से इनकार नहीं करते, उससे दूर भी नहीं भागना चाहते। हम राजनीति के हृदय को बदलना चाहते हैं।49 के विरोध में 51 प्रतिशत जीतकर जो सरकार सत्ता-स्थान में आई हो, वह सही अर्थों में जनता की प्रतिनिधि नहीं है। जिस जनता के नाम पर वह राज्य करती है, उसमें जनता का क्या स्थान है? 'राज करना' यह विचार ही बिल्कुल मिथ्या है। हमें तो लोगों की सेवा करनी है। इसमें सत्ता को संचित करने का कोई प्रयत्न हो ही क्यों? सत्ता द्वारा सेवा हो सकती है, यह भ्रम है।' ❑

प्रसंगवश

गांधी जीवित रहेगा

❑ **लक्ष्मी दास**

गांधी से भयभीत लोगों ने गांधी के प्रति घृणा के वशीभूत होकर गांधी को गोली मार दी। गोली मारने के बाद यह सुनिश्चित होने के बाद कि गांधी के प्राण पखेरू उड़ गये हैं, गोली मारने वालों ने सोचा कि वे अब चैन की नीद सो सकते हैं। लेकिन गांधी अपनी चिता से उठकर पहले से अधिक ताकतवर और मुखर होकर दुनिया के सामने खड़ा हो गया। गांधी शरीर की चारदीवारी के अंदर रह कर जो नहीं कर सका, वह सब कुछ शरीर से आजाद होने के बाद करने लगा। गांधी की यह ताकत देखकर गांधी से नफरत करने वाले लोग परेशान हो गये। अब कभी वे नाथूराम गोडसे का मंदिर बनाते हैं और कभी गांधी के पुतले को गोली मारकर गांधी को नेस्तानाबूत करना चाहते हैं। लेकिन यह क्या? गांधी के पुतले को गोली मारने वालों को भी, नकारात्मक ही सही, गांधी ने प्रसिद्धि दिला दी। यही गांधी तत्त्व है। वह अपने विरोधियों को भी सबकी निगाहों में ला खड़ा करता है। लेकिन जब गांधी को गोली मारी गयी थी तो कुछ लोगों को छोड़कर पूरे देश ने, पूरी दुनिया ने इस घोर अपराध की निन्दा की थी। गांधी को न तो गोली से मारा जा सकता है और न गाली से ही मारा जा सकता है। गोली और गाली से गांधी को मारने का पूरा प्रयास करके देख लिया, लेकिन दर्द बढ़ता गया, जैसे-जैसे दवा की गयी। जैसे जैसे गांधी को नेस्तनाबूत करने का प्रयास किया जाता है, गांधी अधिक मुखर होकर, एक नये निखार के साथ सामने खड़ा हो जाता है। आइए, अब हम आपको गांधी को मारने का रास्ता बताते हैं। हम जानते हैं कि गांधी को कैसे मारा जा सकता है, यद्यपि हम भी प्रयास करने के बावजूद वैसा कर नहीं पाये। परन्तु आप हमारे बताये हुए रास्ते पर चलें तो हो सकता है कि आपको सफलता मिल जाये।

आज पूरा विश्व सर्वनाश के कगार पर खड़ा है। एटम बमों और हाइड्रोजन बमों का इतना भंडारण है कि कुछ ही समय में दुनिया को समाप्त किया जा सकता है। ऐसे मौके पर संयुक्त राष्ट्र संघ को गांधी याद आया और गांधी के जन्मदिन को 'अहिंसा दिवस' के रूप में मनाने का संयुक्त राष्ट्र संघ ने तय किया। गांधी आज की हिंसा का उत्तर है। यदि यह हिंसा समाप्त हो जाये, हथियारों का भंडारण समाप्त हो जाये, दुनिया में आपसी विश्वास कायम हो जाये तो गांधी की जरूरत नहीं रहेगी। गांधी को कोई नहीं पूछेगा। गांधी शोषण के विरुद्ध खड़ा है। यदि समाज से शोषण समाप्त हो जाये तो गांधी की आवश्यकता समाप्त हो जायेगी। गांधी ने साम्प्रदायिकता के विरोध में लड़ाई लड़ी, उसी साम्प्रदायिकता के दावानल में गांधी शहीद हो गया। यदि यह साम्प्रदायिकता, धार्मिक वैमनस्यता, जातिगत वैमनस्यता आदि समाप्त हो जाये तो गांधी को कोई नहीं पूछेगा। समाज में छुआछूत, भेदभाव फैला हुआ है। गांधी ने इस सबके विरुद्ध एक बड़ी लड़ाई लड़ी। इस कुरीति में बहुत बड़ी कमी आयी है। लेकिन यह ऊंच-नीच का भेद कई रूपों में हमारे सामने अब भी मुंह बाये खड़ा है। यदि यह ऊंच-नीच, गरीब-अमीर का भेद मिट जाये तो गांधी की आवश्यकता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी। ऐसी अनेक समस्याएं समाज में हैं, जिनके विरुद्ध गांधी खड़ा दिखाई देता है। ऐसी अनेक चुनौतियां हैं, जिनका उत्तर लोगों को गांधी में दिखाई देता है। जब तक यह समस्या रहेगी, गांधी जीवित रहेगा। यदि ये समस्याएं हल हो जाएं तो गांधी को गोली मारने की आवश्यकता नहीं रहेगी। समस्याएं हैं और गांधी विचार उन समस्याओं का हल है, इसलिए गांधी गोली और गाली खाने के बाद भी जीवित है।

गोली और गाली से गांधी को मारने वालों से मेरा यही आग्रह है कि एक ऐसा समाज बनाओ, जहां गांधी की आवश्यकता ही न रहे। आपकी गाली और गोली से समाज में नफरत फैलती है। इस नफरत को मिटाने के लिए गांधी की आवश्यकता रहेगी। क्या हम हथियार मुक्त, शोषण मुक्त, ऊंच-नीच मुक्त, जाति मुक्त, साम्प्रदायिकता मुक्त, नफरत मुक्त समाज का निर्माण कर सकते हैं? यदि हां, तो फिर गांधी को गोली और गाली दोनों की आवश्यकता नहीं रहेगी।

गांधी को व्यक्ति समझने वाले यह भूल करते हैं कि गांधी को मार दिया तो गांधी समाप्त हो गया। जबकि वास्तव में गांधी एक विचार है। एक ऐसा विचार जिसकी दुनिया को आवश्यकता है, इसलिए गांधी जीवित है। और जब तक ये समस्याएं रहेंगी तब तक गांधी जीवित रहेगा। ❑

पत्र

प्रिय संपादक जी,

नये तेवर और नये कलेवर के साथ सर्वोदय जगत बहुत अच्छा लगा। इस नयी तैयारी के लिए नयी टीम को धन्यवाद। कुछ सुझाव हैं, यदि ध्यान दे सकें, तो मुझे उम्मीद है कि सर्वोदय जगत और सुधर कर मुखर हो सकेगा।

1. लेख दो पृष्ठ से अधिक न हों।
2. देश/दुनिया के कुछ समाचार/टिप्पणियां छापने का प्रयत्न हो।
3. सर्वोदय, लोकसेवक, सर्वोदय मित्र आदि से संबंधित देशभर के समाचार फोटो सहित छपें। **–भवानी शंकर कुसुम**

उत्तर

आपकी त्वरित प्रतिक्रिया और सर्वोदय जगत के संबंध में आपके सुझावों के लिए हार्दिक आभार। सभी लोकसेवकों और सर्वोदय मित्रों से अनुरोध है कि अपने-अपने स्थान से समाचार और चित्र निरंतर भेजते रहें। उन्हें प्रकाशित करके सर्वोदय जगत को खुशी होगी। **–सं.**

धारावाहिक

'बा' भारत वापसी

❑ गिरिराज किशोर

चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। उनके बारे में उपलब्ध जानकारियां नहीं के बराबर हैं। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है– पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का अगला अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहा है। –सं.

दांडी पहुंचकर पद-यात्रियों ने समुद्र-तट पर लगभग रात-भर प्रार्थना की। 6 अप्रैल, 1930 को सूर्योदय के साथ बापू के साथ समुद्र जल में डुबकी लगाई। फिर किनारे आकर सुनहरी किरणों के स्तवन के साथ, देश-विदेश के किलकते कैमरों की चमक में, पचहत्तर हजार लोगों के सामने बापू झुके, मिट्टी मिला नमक का टुकड़ा उठाया। पूरा समुद्र तट जय-जयकार से गूंज उठा। लहरें भी जैसे चौंककर देखने के लिए उठीं, यह कौन है, फिर धीरे-धीरे बैठ गईं। कहीं पुलिस का नामोनिशान नहीं था। सब कुछ स्वसंचालित था। न पकड़ थी, न धकड़।

उस शांत समुद्र-तट पर असहयोग का ऐसा बिगुल बजा कि दूरस्थ दिल्ली की सत्ता कांप उठी। ऐसा लगा कि असहयोग के उस नये फूटे झरने में हर कोई डुबकी लगा रहा है। देश-भर के समुद्रों, नदियों और पोखरों के ग्राम और नगरवासी, प्रतिबंधित नमक बनाने के लिए टूट पड़े थे। बूढ़े, जवान, औरत, मर्द, लड़के, लड़कियां समुद्र तट से अपने-अपने बर्तनों में समुद्र जल भर रहे थे। सम्भ्रांत और कुलीन नागरिक भी चाय की केतलियों में जल उबालकर नमक कानून तोड़ने का संस्कार पूरा कर रहे थे। जो कांग्रेसी विरोध में थे, वे भी अपना विरोध भूलकर बम्बई में प्रतिबंधित नमक की कांग्रेस मुख्यालय पर नीलामी कर रहे थे। गांधी ने प्रेस को संबोधित करते हुए कहा, 'मैं सत्ता और अधिकार के बीच इस संघर्ष में दुनिया का सहयोग चाहता हूं।' उनका यह संदेश सारे संसार में चुटकी बजाते फैल गया।

यह एक ऐसा अहिंसात्मक असहयोग आंदोलन था जिसने पूरे देश को जगा दिया था। कन्याकुमारी से कश्मीर तक गांधी की आवाज गूंज गई थी। नमक जैसी सामान्य वस्तु जो अंतिम से अंतिम और सम्पन्न से सम्पन्न आदमी की जरूरत थी, हर व्यक्ति के हाथ में जागृति की मशाल बन गई थी। अंग्रेजों ने सोचा भी नहीं था कि नमक जैसी नगण्य वस्तु गांधी के स्पर्श मात्र से पूरे देश के लिए जागृति और परिवर्तन का ध्वज बन जायेगा।

गांधीजी ने भविष्य के लिए अहिंसक प्रतिरोध की योजना के बारे में वाइसराय को एक पत्र लिखा था, जिसमें धरसाना नमक फैक्ट्री का अहिंसात्मक ढंग से अधिग्रहण करना भी सम्मिलित था। वह ब्रिटिश सरकार के लिए कुछ अधिक कड़वी खुराक थी। अशांति के जिस खतरे से सरकार बचना चाहती थी, उसके बारे में यह सोचकर कि जो होगा देखा जायेगा, गांधी को पांच मई को सवेरे बंदी बनाकर यरवदा जेल, पूना ले गये। ब्रिटिश सरकार इतनी डरी हुई थी कि वह एक आम मुकदमा नहीं चलाना चाहती थी।

जब गांधीजी को लेकर पुलिस की गाड़ी चलने लगी तो गहन अंधेरा था। उस अंधेरे को चीरती हुई एक लड़की आई और बापू से पूछा, 'बा को कोई संदेश देना है?'

बापू ने हंसकर कहा, 'बा से जाकर कहना, वह एक वीरांगना हैं।'

बा को मालूम नहीं था कि वीरांगना कहकर बापू ने भविष्य के लिए संकेत दिया था। बापू ने अपनी गिरफ्तारी के बाद यह सूचना भिजवा दी कि धरसाना के नमक का कारखाना घेरने वाले दस्ते की अगुवाई मणिलाल करेगा। बा को लगा कि उनके लिए दक्षिण अफ्रीका के दिनों को जीने का समय फिर लौट आया।

21 मई, 1930 को ढाई हजार सत्याग्रही सफेद खादी की धोती, कमीज और वैसी ही गांधी टोपी पहने नमक का कारखाना घेरने जा पहुंचे। कारखाने से सौ गज की दूरी पर सामूहिक प्रार्थना की। फिर मणिलाल के नेतृत्व में पच्चीस सत्याग्रहियों का एक दस्ता कारखाना घेरने आगे बढ़ा। सामने पानी से भरी खाई थी। फिर लोहे के कंटीले तारों का घेरा था। चार सौ के करीब पुलिस वाले, लोहे से मढ़ी लाठियों से लैस, मुस्तैद खड़े थे। पुलिस ने चेतावनी दी, सब तितर-बितर हो जाएं...। सत्याग्रही धीमी गति से, खामोश दो पंक्ति में आगे बढ़ते रहे। मणिलाल आगे था। फिर जो हुआ वह अकल्पनीय था। उस अत्याचार और गांधी के सत्याग्रहियों के साहस और शक्ति को संसार ने देखा। अमेरिका के यूनाइटेड प्रेस ने वेब मिलर की आंखों देखी रिपोर्ट दुनिया-भर में पहुंचा दी। लोहा मढ़ी लाठियां सिर पर पड़ती थीं,

खोपड़ियां चटखती थीं और एक सत्याग्रही खून से लथपथ जमीन में गिरता जाता था। फिर दूसरा...तीसरा...इसी तरह एक के बाद एक गिरता जाता था। स्ट्रेचर टुकड़ी आती थी और सत्याग्रही को उठा ले जाती थी। अगली पच्चीस सत्याग्रहियों की टुकड़ी जगह ले लेती थी। अस्थाई अस्पताल में लोगों को प्राथमिक उपचार के लिए ले जाया जाता था।

मिलर ने लिखा था, 'मैंने जाकर देखा, सब जख्मी खजूर के पत्तों से बने सायबान में नंगी जमीन पर पड़े थे। मैंने गिना, तो देखा तीन सौ बीस जख्मी, फटी खोपड़ी के कारण अभी तक बेहोश थे। बहुतों को इलाज तक नहीं मिल पाया था। दो मर चुके थे।' अंत में एक पंक्ति लिखी थी, 'अठारह, बीस साल मुल्कों में रिपोर्टिंग करने के दौरान मैंने इतना खौफनाक मंजर पहले कभी नहीं देखा।' किसी रिपोर्टर ने लिखा था, 'गांधी जीत गया।'

मणिलाल का कहीं पता नहीं था। उसका क्या हुआ। उसकी पत्नी और कस्तूरबा की समझ में नहीं आ रहा था, कहां जाकर ढूंढ़ें? बेचैनी हर क्षण बढ़ती जा रही थी। क्या हुआ, बंदी बना लिया गया या गहरी चोट आई है...आगे सोचने का साहस नहीं हो रहा था। सोचती भी थी तो मुंह से निकलता था, नहीं ऐसा नहीं हो सकता।

दिन पर दिन बीते, कहीं से कोई खबर नहीं आई। एक आतंक भरी निराशा, जिसे वे फटकने नहीं देना चाहती थी, दिलों में बैठती जा रही थी। एक दिन सूचना मिली कि वह सूरत की किसी जेल में है। खोपड़ी की हड्डी टूट गई है। धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। मणिलाल को जल्दी ही अपनी छह महीने की सजा पूरी करने के लिए साबरमती जेल भेज दिया जाएगा। मणिलाल के सिर की हड्डी टूटी होने के बावजूद उत्सव का सा वातावरण हो गया था। जहां सब कुछ खो जाने का खतरा बन गया हो, बाद में पता चले कि कुछ बच गया तो उत्सव का माहौल होना स्वाभाविक है।

मणिलाल को साबरमती जेल ले आया गया था। वहीं रामदास भी था। जेल आश्रम के पास ही था। रामदास और दूसरे कैदियों से मिलने की अनुमति नहीं थी। मणिलाल के वहां आ जाने पर कस्तूरबा और सुशीला मिलने गये। सुशीला का जेल देखने का यह पहला अवसर था। वहां की हालत देखकर उसकी तबीयत मिचलाने लगी। कस्तूरबा जेलर के कमरे में शांत बैठी दोनों बेटों के लाए जाने की प्रतीक्षा कर रही थी। मणिलाल और रामदास लाए गए तो सुशीला भावुक हो उठी, उसका गला रुंध गया। बा उसी शांत भाव को बनाए हुए मणिलाल और रामदास से बतियाने लगी। मणिलाल बिल्कुल जर्जर हो गया था। सर पर अभी पट्टी बंधी हुई थी। वह दूसरे सत्याग्रहियों के बारे में पूछने लगी। सुशीला भी देख रही थी कि उसके पति का वजन कितना घट गया। पर वह चुप थी। बा ने मणिलाल से कहा, सुशीला से बात कर लो, वह इंतजार कर रही है। सत्याग्रही रोज गिरफ्तारियां दे रहे थे। बा को लगता था महिलाओं को भी असहयोग आंदोलन में सक्रिय योगदान देना चाहिए। इसी बीच जेल से महिलाओं के लिए संदेश आया, 'मेरी सारी उम्मीद महिलाओं पर टिकी है।' और लिखा था, 'मेरा यह मानना है कि अहिंसा की अंतिम विजय महिलाओं पर निर्भर है।'

कस्तूर ने सोचा, बापू ने मेरे मन की बात कैसे जान ली!

कस्तूरबा ने आश्रम की जिम्मेदारी दूसरों पर छोड़कर, गांव-गांव और नगर-नगर घूमना आरंभ कर दिया था। बापू का वह संदेश बा के कान में गूंजती आवाज बन गया था। वह घर-घर जाकर महिलाओं को असहयोग के दूसरे दौर में भाग लेने के लिए प्रेरित कर रही थी। उनको समझा रही थी, 'शराब की दुकानों पर धरना दो, यही देश की आजादी का दुश्मन है।' बा का मानना था कि महिलाएं ही धरना देने के लिए अधिक उपयुक्त हैं। तब भारतीय पुलिस भी महिलाओं को गिरफ्तार करने से बचती थी। दुकानदार और शराब के खरीदार भी धरने पर बैठी महिलाओं को लांघकर जाने में झिझकते थे। बा की बात औरतों को समझ में आई। शराब की बिक्री में भी अंतर पड़ा। बापू को पता चला तो वे समझ गये कि लगता है, बा बहुत भाग-दौड़ कर रही है। बापू ने अपने हाथ से कते सूत की साड़ी बुनवाकर बा को प्रशंसा स्वरूप भेंट करने के लिए कहलाया। यह शायद बापू की सबसे बड़ी और गहन भावाभिव्यक्ति थी। इस अभिव्यक्ति की पुष्टि उनके एक पत्र से हुई, 'मैं मानता हूं कि महिलाओं में जो सामर्थ्य है, वह ईश्वर प्रदत्त है। इसलिए जो काम वे पकड़ती हैं, उसमें उन्हें सफलता मिलती है।' इस काम से बा की ख्याति पूरे देश में फैल गयी थी।

बापू के प्रोत्साहन से बा के काम में गति आ गई थी। वह शांति से काम करती थी। वह चाहती थी कि किसी तरह के प्रदर्शन के बिना अपना दायित्व निबाहती रहे। देवदास पंजाब के गुजरात शहर में बंद था। बा देवदास से मिलने गुजरात गई। गाड़ी से उतरी तो देखा स्टेशन पर हजारों की संख्या में लोग जमा थे। बा ने किसी से पूछा 'कौन आ रहा है, इतने लोग क्यों जमा हैं?'

'हम सब आपके स्वागत के लिए आये हैं।' उसने जवाब दिया।

'मेरे...!' आश्चर्य से बा ने पूछा।

'जी हां...' एक नौजवान ने जवाब दिया। वह बोला, 'बा को जुलूस के रूप में शहर ले जायेंगे।' बा के चेहरे पर परेशानी आ गई। सोचने लगीं, मैं अपने बच्चे की खैर-खबर लेने आई थी। यह किस चक्कर में फंस गई। पर इतने लोगों की बात कैसे ठुकरा सकती थी। *...क्रमशः अगले अंक में*

सूचना

1 मई का दिन पूरी दुनिया में मजदूर दिवस के रूप में मनाया जाता है। श्रम और श्रमिक दर्शन की अवधारणा पर केन्द्रित सर्वोदय जगत का अगला अंक 18-19 (1-31 मई 2019) संयुक्तांक होगा।

सुधी पाठकों और सर्वोदय जगत के लेखकों से आग्रह है कि इस अंक के लिए अपनी सामग्री यथाशीघ्र भेजें। –सं.

ग्राम-स्वराज्य हासिल करना है, भेंट में नहीं मिलेगा

❑ धीरेन्द्र मजूमदार

भारत से अंग्रेज तो चले गये, लेकिन स्वराज्य स्थापित नहीं हुआ। स्वराज्य ऐसी चीज नहीं है, जो यों ही मिल जाती है। स्वराज्य तो प्राप्त करना होता है। कौन हासिल करेगा यह स्वराज्य? किसको जरूरत है असली स्वराज्य की? इसको समझने के लिए देश की हालत को कुछ दूसरे ढंग से समझना होगा।

हम देखते हैं कि देश में तीन जातियां चलती हैं :

1. भुखिया, 2. दुखिया, 3. सुखिया।

जो अन्न पैदा करने वाले मजदूर हैं, जो सबसे ज्यादा मेहनत करते हैं वह भुखिया हैं।

इसके बाद दो नंबर में मेहनत करने वाला किसान है, जो दुखिया है।

और पैदा करने के लिए जो कुछ भी मेहनत नहीं करता है वह सुखिया है।

सरकार के नौकर, बाजार के सेठ सुखिया-वर्ग में आते हैं अंग्रेजों का छोड़ा राज्य इन्हीं के हाथ में आया है। सच्चे स्वराज्य की स्थापना के लिए इनसे मुक्ति पाना जरूरी है। भुखिया और दुखिया दोनों को मिलाकर सुखिया से मुक्त होना पड़ेगा। सरकार जितनी बढ़ेगी, उतनी ही सुविधाप्राप्त वर्ग की संख्या बढ़ेगी और जितनी हो सुखिया की संख्या बढ़ेगी, उतनी ही भुखिया की भूख और दुखिया का दुख बढ़ेगा। जैसे-जैसे सरकार घटेगी, वैसे-वैसे सुखिया की संख्या घटेगी और भुखिया की भूख तथा दुखिया का दुख घटेगा। उसी तरह अपनी जरूरत की चीजों के लिए जैसे-जैसे आप बाजार से मुक्त होंगे वैसे-वैसे आपकी भूख मिटेगी और दुख घटेगा।

इसलिए जल्दी से ग्राम-स्वराज्य का काम पूरा करके गांव को सरकार-मुक्त बनाना होगा। इस काम में देर मत करो। इसे तुरंत पूरा करो। क्योंकि सरकार और बाजार आज तेजी के साथ जनता को दबाते चले जा रहे हैं। उधर दबाने का काम तेज रफ्तार से हो और मुक्ति के आंदोलन में सुस्ती करते रहें, तो पूरी जनता संपूर्ण रूप से दबकर मर जायेगी।

अब सवाल यह है कि इस क्रांति का काम करेगा कौन? मैं जब गांवों में जाता हूं तो देखता हूं कि गांव के लोग मानते हैं कि कोई सर्वोदय-जमात है और वह मजबूत बनकर गांव-गांव में जाकर उन्हें मुक्त कर देगी। जहां कहीं ग्रामदान होता है वहां के लोग शिकायत करते हैं, ''क्यों साहब, हमने सालभर हुआ ग्रामदान कर दिया और आप हमारे गांव में कुछ करते नहीं हैं?'' क्या कहा जाय उन्हें? दुनिया के इतिहास से उन्होंने कुछ सीखा नहीं है। हमने देखा है कि जब कभी कोई पार्टी या जमात जनता की मुक्ति का काम करती है तो जनता की छाती पर पहले से जो जमात बैठी रहती है, उससे मुक्त कर वह खुद उसकी छाती पर बैठ जाती है। जनता जहां-की-तहां पड़ी रहती है। इसीलिए गांधीजी ने कहा कि जनता को अपने-आप आंदोलन कर अपनी मुक्ति की कोशिश करनी है। किसी जमात के भरोसे वह न रहे। आखिर आप चाहते क्या हैं? इतनी जमातें, इतनी पार्टियां, इतनी बड़ी संख्या बिना मेहनत किये खाने वाले सुखिया लोगों की आपके बीच में मौजूद हैं। क्या इतने से आपको संतोष नहीं है? क्यों आप अपने बीच सर्वोदय नामधारी एक और जमात बुलाना चाहते हैं? क्या उससे आपकी भूख मिटेगी और दुःख कम होगा? यह तो सोचिये कि भला बाहर के लोग आकर स्वराज्य दिला सकते हैं? भारत को स्वराज्य क्या कोई जर्मनी से आकर दिला सकता था? भारत को तो स्वराज्य तब मिला, जब भारत के लोगों ने ही इसकी कोशिश की। भारत की जनता ने जब अंग्रेजों से मुक्त होने की ठान ली, तब जाकर स्वराज्य मिला। इसी तरह जब दुखिया और भुखिया मिलकर यह ठान लेंगे कि उनको पूंजीवादी बाजार-तंत्र और साम्राज्यवादी नौकरशाही की व्यवस्था-नीति से छुटकारा पाना है तो ही स्वराज्य हासिल हो सकेगा।

सरकार और बाजार से मुक्ति का मार्ग

स्वराज्य की तरह ग्राम-स्वराज्य भी लेना होगा, गांव के नेतृत्व और गांव के ही संगठन के जरिये। अब सवाल यह है कि उसका तरीका क्या हो? तरीका वही होगा, जो अंग्रेजी शोषण से मुक्ति के लिए भारत के लोगों ने अपनाया था। शुरू में देश के दो-चार नेता स्वराज्य की बात कहते थे। जनता सुनती नहीं थी। वह कहती थी कि अंग्रेज सरकार तो माई-बाप है। लेकिन देश के कुछ थोड़े लोग, जिनको विश्वास था कि अंग्रेजी राज के चलते देश बरबाद हो रहा है, उन्होंने कांग्रेस नाम का एक संगठन बनाया। जो मुट्ठीभर लोग इस बात को मानते थे, उतने ही लोग उसके सदस्य हुए और दूसरों को समझाकर सदस्य बनाते रहे। आखिर में 1942 में सारी जनता उठ खड़ी हुई और पांच साल के अंदर अंग्रेज चले गये। उसी तरह हर गांव में, जो भी दो-चार आदमी ग्रामस्वराज्य की बात समझते हैं और यह मानते हैं कि जब तक देहाती जनता सरकार और बाजार से मुक्त नहीं हो जायेगी, तब तक उसका शोषण और दमन दिन-ब-दिन बढ़ता ही चला जायेगा और वह बरबाद हो जायेगी, उनको एक छोटी-सी ग्राम-स्वराज्य-सभा बनानी होगी और गांव के लोगों को समझाकर उस विचार में शामिल करना होगा तथा ग्राम-स्वराज्य तक पहुंचना होगा। नहीं तो इन दोनों भयंकर राक्षसों से देहाती जनता बच नहीं पायेगी। ❑

भूदान प्रश्नोत्तरी

भू-दान-यज्ञ नख-दर्पण में

❑ दादा धर्माधिकारी

भूमि-दान किसलिए है?

कृषि-प्रधान देश में समाज-परिवर्तन का आरंभ जमीन की व्यवस्था के परिवर्तन से होता है। आज जमाने का जैसा रुख है, उससे यह साफ है कि दुनियाभर में आगे की अर्थ-रचना अन्न-प्रधान और कृषि-प्रधान होने वाली है। जमीन केवल अन्न-उत्पादन का साधन नहीं है, जमीन वसुंधरा भी है। सारी खदानें जमीन में हैं, कच्चा माल और ईंधन आदि चीजें जमीन से ही मिलती हैं।

इसलिए क्रांति का आरंभ जमीन से होगा। पहली बात, देश कृषि-प्रधान है। दूसरी बात, जमाने का रुख कृषि-प्रधान अर्थ-रचना की ओर है। तीसरी बात, भूमि वसुंधरा है। इसलिए हमने भूमि से आरंभ किया।

क्या हम एक से मालकियत लेकर दूसरे को मालकियत देना चाहते हैं?

बिलकुल नहीं। हम मालकियत की बुनियादों को और उत्पादक की भूमिका को बदल देना चाहते हैं।

इसके लिए पहला कदम यह है कि हम उत्पादन के साधन उत्पादक के कब्जे में दे देना चाहते हैं। जोतने वाले के कब्जे में जमीन हो, गैर-जोतने वाले के कब्जे में जमीन न हो। उत्पादक की मालकियत की स्थापना हो, अनुत्पादक की मालकियत का निराकरण हो। और अंत में मालकियत का ही निराकरण हो। उत्पादन के साधन पर मालकियत किसी की न रहे।

मालकियत की बुनियाद बदलने का अर्थ है—अनुत्पादक की मालकियत का निराकरण, उत्पादक की मालिकी की स्थापना। उत्पादक की भूमिका बदलने का मतलब यह है कि उत्पादक भी अपने को उत्पादन के साधनों का मालिक नहीं मानेगा, उनका समाजीकरण होगा। आरंभ होगा भूमिदान से और परिसमाप्ति होगी ग्रामदान और समाजीकरण से।

सम्पत्ति-दान किसलिए?

सम्पत्ति-दान है—संग्रह के निराकरण के लिए, जीविका के शुद्धिकरण के लिए और अनुत्पादक व्यवसायों के निराकरण के लिए।

1. संग्रह का विसर्जन,
2. जीविका का शुद्धिकरण, और
3. अनुत्पादक व्यवसायों का निराकरण।

सम्पत्ति-दान केवल इसलिए नहीं है कि एक करोड़ में से आपने हमें पचास लाख दे दिये और पचास लाख रख लिये। इसका मतलब सम्पत्ति दान-नहीं है। सम्पत्ति दान में आपका यह संकल्प है कि जो रोजगार मैं कर रहा हूं, उस रोजगार का समाज से निराकरण चाहता हूं। इस रोजगार में यदि मुझे गलत काम करने पड़ते हैं तो उन्हें कम करता चला जाऊंगा। जीविका के शुद्धिकरण और संग्रह के विसर्जन का अर्थ, 'विनोबा को छठा हिस्सा भी देता चला जाऊंगा और सम्पत्ति भी बढ़ाता चला जाऊंगा', यह नहीं होगा। संग्रह का विसर्जन और अनुत्पादक व्यवसायों का निराकरण करना होगा। ❑

अंतर्राष्ट्रीय

भुखमरी का कलंक ढोती सभ्यता

संयुक्त राष्ट्र और यूरोपीय संघ की रिपोर्ट में कहा गया है कि युद्ध, जलवायु से जुड़ी आपदाओं और आर्थिक अशांति जैसे कारणों से पैदा हुए खाद्य संकट की वजह से दुनिया के 53 देशों के 11 करोड़ से अधिक लोगों को पिछले साल घोर भुखमरी जैसी स्थिति का सामना करना पड़ा था. खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ), विश्व खाद्य कार्यक्रम (डब्लूएफपी) और यूरोपीय संघ की 'ग्लोबल रिपोर्ट ऑन फूड क्राइसिस 2019' रिपोर्ट में बताया गया है कि एक करोड़ से ज्यादा लोग पिछले तीन साल से लगातार भुखमरी का सामना कर रहे हैं. रिपोर्ट के अनुसार, भुखमरी का सामना कर रहे इन 11.3 करोड़ लोगों को तत्काल खाद्य पदार्थ, पोषक आहार और आजीविका की जरूरत है. खाद्य पदार्थ के सबसे भयावह संकट का सामना यमन, डेमोक्रेटिक रिपब्लिक ऑफ कांगो, अफगानिस्तान, इथियोपिया, सीरिया, सूडान, दक्षिणी सूडान और उत्तरी नाइजीरिया जैसे देश कर रहे हैं. इन देशों में कुल सात करोड़ 20 लाख लोग खाद्य संकट का सामना कर रहे हैं.

ब्रसेल्स में रिपोर्ट पर विचार के लिए बुलाई गई दो दिवसीय बैठक में खाद्य एवं कृषि संगठन के महानिदेशक होसे ग्राजियानो दा सिल्वा ने कहा, 'इस रिपोर्ट से स्पष्ट होता है कि 2018 में खाद्य असुरक्षा के शिकार लोगों की संख्या में मामूली कमी आई है लेकिन यह अभी भी बहुत ज्यादा है.' सिल्वा ने कहा कि जीवन बचाने के लिए हमें आजीविका बचाना भी ज़रूरी है.' रिपोर्ट के मुताबिक पिछले साल जलवायु और प्राकृतिक आपदाओं ने 2.9 करोड़ लोगों को खाद्य असुरक्षा की ओर धकेल दिया. विश्व खाद्य कार्यक्रम के कार्यकारी निदेशक डेविड बीज़ली ने कहा, 'जीवन बचाना और मानवीय पीड़ा पर मरहम लगाना जरूरी है लेकिन इससे खाद्य संकट के मूल कारणों को दूर नहीं किया जा सकता.' डेविड ने कहा, 'भुखमरी को वास्तविक रूप में समाप्त करने के लिए हमें उसके मूल कारणों – संघर्ष, अस्थिरता, जलवायु के दुष्प्रभाव पर चोट करनी होगी'

उन्होंने भुखमरी को खत्म करने के लक्ष्य को हासिल करने के लिए बच्चों को अच्छा सेहतमंद आहार उपलब्ध कराने और शिक्षित बनाने के साथ ही महिलाओं को सशक्त बनाने और ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे को मजबूत बनाने की जरूरत पर जोर दिया.

इसके अलावा रिपोर्ट में संघर्षों के रोकथाम और शांति को टिकाऊ बनाने के महत्व को बताया गया है जिससे आजीविका बचाने, संरचनात्मक कमजोरियों को कम करने और भुखमरी के मूल कारणों को दूर करने में मदद मिल सके. यह रिपोर्ट हर साल अंतरराष्ट्रीय मानवीय राहत और विकास से जुड़े साझेदार संगठनों के नेटवर्क 'ग्लोबल नेटवर्क अगेंस्ट फूड क्राइसिस' द्वारा तैयार की जाती है। ❑

आइये करके सीखें!

गांधीजी के हेल्थ सीक्रेट्स

❑ राहुल आनंद

महात्मा गांधी हाई बीपी के मरीज थे। 5 मार्च 1939 को उनका ब्लड प्रेशर 180/110 था। इसी तरह 7 मार्च 1939 को बीपी 178/112 आया था। अमूमन उनका ब्लड प्रेशर हाई ही रहता था। एनबीटी के पास मौजूद उनकी मेडिकल रिपोर्ट में जहां एक तरफ उन्हें कई बार बीपी की पुष्टि हो रही है, वहीं उनका शुगर लेवल लो पाया गया है। उनका शुगर लेवल कम रहता था जो कभी 80 होता था तो एक बार 40 तक पहुंच गया था। इसके बावजूद वह किसी प्रकार की दवा लेने से हमेशा परहेज करते रहे। बापू की हेल्थ रिपोर्ट नेशनल गांधी म्यूजियम में है, एम्स और आईसीएमआर मिलकर इसे मेडिकल जर्नल में पब्लिश करने की तैयारी कर रहे हैं।

इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च (ICMR) के डीजी डॉक्टर बलराम भार्गव ने कहा कि हम गांधीजी की मेडिकल रिपोर्ट की स्टडी कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि उनकी रिपोर्ट देखने के बाद इतना कहा जा सकता है कि वह ब्लड प्रेशर के मरीज थे। नेशनल गांधी म्यूजियम के डायरेक्टर ए. अन्नामलाई ने कहा कि पांच साल पहले उन्हें गांधीजी की मेडिकल रिपोर्ट मिली थी, वह अब किसी धरोधर से कम नहीं है।

2 अक्टूबर से पहले इसे पब्लिक के सामने लाने की तैयारी की जा रही है। उन्होंने बताया कि डॉक्टर जीवराम मेहता और डॉक्टर बीसी रॉय गांधी जी के प्रमुख डॉक्टरों में से थे। 1939 में जब वह अनशन पर थे तब 7 मार्च को उनका बीपी 178/112 था। कई बार उनकी ईसीजी भी की गई थी, लेकिन हर बार उनकी रिपोर्ट नॉर्मल रही। फरवरी 1936 को उनकी ब्लड टेस्ट रिपोर्ट में शुगर लेवल काफी कम केवल 40 दर्ज किया गया। इसके बाद भी उन्होंने कभी दवा नहीं ली।

ली थी नर्सिंग केयर की ट्रेनिंग भी

रिपोर्ट के आधार पर डायरेक्टर ए. अन्नामलाई ने कहा कि गांधी जी ने साउथ अफ्रीका में नर्सिंग केयर की ट्रेनिंग ली थी। उन्होंने कहा कि साउथ अफ्रीका में हुए दो युद्धों में उन्होंने वॉलंटियर की भी भूमिका निभाई थी। वह हमेशा अपनी सेहत को लेकर अलर्ट रहते थे और अपनी बीमारी के बारे में जानना चाहते थे। अन्नामलाई ने कहा कि जब उनके तीसरे बच्चे रामदास का जन्म हो रहा था तो उन्होंने डॉक्टर को डिलीवरी के दौरान मदद की थी और चौथे बच्चे की डिलीवरी में जब डॉक्टर नहीं पहुंच पाए तो उन्होंने देवदास की डिलीवरी खुद की थी। उन्होंने कहा कि गांधीजी कोई चीज बिना पढ़े नहीं करते थे, वह खुद इसके बारे में पढ़ते थे। क्योंकि वह डॉक्टर बनना चाहते थे, लेकिन परिवार की वजह से वकील बन गए। लेकिन जब भी मौका मिलता था, वह इसमें सहयोग जरूर करते थे। हमेशा हेल्थ के प्रति सजग रहते थे, डाइट, फास्ट, वॉकिंग पर ध्यान देते थे, कभी-कभी एक-एक दिन में 16 मील तक चलते थे।

गांधी दर्शन में रखे गए कुछ दस्तावेजों के अनुसार एक बार जब गांधीजी का स्वास्थ्य खराब हो गया था और वह दवाई न लेने और दूध न पीने की प्रतिज्ञा के कारण अच्छे नहीं हो पा रहे थे, तब कस्तूरबा की बात मानकर उन्होंने बकरी का दूध पीना शुरू किया।

मिट्टी के अनमोल गुणों से वह परिचित थे, इसलिए ब्लड प्रेशर के इलाज के लिए वह अपने सिर पर मिट्टी रखते थे।

शारीरिक शुद्धि के लिए वे नैसर्गिक तरीके से किए जाने वाले इलाज के बारे में किताबें पढ़ते थे। दवा के प्रति उनकी रुचि कम होती गई और उन्होंने उपवास व खुराक के प्रयोग शुरू किए।

उन्होंने आरोग्य की कुंजी किताब लिखी, वह मानते थे कि कुदरती नियमों का पालन करने से संपूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त हो सकता है।

वह अपने इलाज के लिए सर्पगंधा का इस्तेमाल करते थे, यह उस समय भी पाउडर के रूप में मिलता था।

कुछ ऐसी थी उनकी डाइट

गांधीजी रोजाना डाइट में दूध, दही, ब्रेड, लहसुन, शहद, उबला अंडा, सोयाबीन, पत्तेदार सब्जी, नारंगी, नीम की पत्ती, सेव, गन्ने का जूस लेते थे। वह सुबह 4 बजे गर्म पाने के साथ शहद लेते थे। आईसीएमआर के डीजी डॉक्टर बलराम भार्गव ने बताया कि गांधीजी को बीपी की समस्या थी लेकिन इसके लिए वह प्राकृतिक चिकित्सा पर ही निर्भर थे। ❑

श्रद्धांजलि

यशवंत जोशी

महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल के भूतपूर्व अध्यक्ष यशवंत जोशी हमारे बीच नहीं रहे। 8 अप्रैल 2019, सोमवार को उनका निधन हो गया। गोरक्षा आंदोलन के प्रति उनकी प्रतिबद्धता थी। कत्लखानों को बंद कराने के लिए किये गये उनके सत्याग्रह मील का पत्थर साबित हुए।

सूर्यकान्त पारीख

भारत छोड़ो आंदोलन के आखिरी स्वतंत्रता सेनानी और बयालीस विरादरी के संस्थापकों में से एक सूर्यकान्त पारीख हमारे बीच नहीं रहे। 5 अप्रैल 2019, शुक्रवार को 93 वर्ष की अवस्था में अहमदाबाद में उनका निधन हो गया।

सर्व सेवा संघ दिवंगतों के सम्मान में अश्रुपूरित श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

वातायन

गौरवशाली इतिहास या गौरवशाली भविष्य!

❑ प्रेम प्रकाश

एक बार दो जर्मन नेशनल्स बनारस आए तो मुझसे मिलना हुआ। वे दोनों प्रेमी युगल थे, लेकिन शादीशुदा नही थे। वे जल्दी ही शादी करने वाले थे और एक-दूसरे के प्रति बला की हद तक आग्रही थे, समर्पित थे और वचनबद्ध भी थे। मेरी बेटी ने उन्हें स्लैम बुक भरने को दी। उसमें एक कॉलम होता है कि आपका सर्वाधिक प्रिय व्यक्ति कौन है। उस कॉलम में दोनों ने ही एकदूसरे का नाम लिखा था-आन्या और फैबियन। दोनों ही समाजशास्त्र के शोधार्थी थे। मेरे घर वे दोनों हिन्दी सीखने आते थे। लगभग छः महीने का ये साथ था हमारा। उन्हे हिन्दी सिखाने के क्रम मे जब हम उनके साथ बैठते थे तो शुरूआत से ही हिन्दी मे खूब बातचीत किया करते थे। राजनीतिक, सामाजिक विश्व की तमाम हलचलों पर उन दोनों से खूब चर्चा होती थी।

उन दिनों अन्ना हज़ारे का आंदोलन रंग बिखेरे हुए था और भ्रष्टाचार के विरुद्ध देशभक्ति की भावना देशभर मे हिलोरें ले रही थी। जाहिर है कि यह विषय हमारी बातचीत में प्रमुखता से शामिल रहता था। रोज सुबह की शुरुआत हम अखबारों मे छपे समाचारों पर चर्चा और संवाद से ही किया करते थे। इसी तरह की एक चर्चा में एक दिन फैबियन ने मुझसे पूछ लिया कि ये अखबार मे जो देशभक्ति लिखा रहता है, उसका मतलब क्या है....? उसे समझाने के लिए मुझे अच्छा टॉपिक मिला, मैंने राष्ट्रीयता की भावना और अपनी मिट्टी के प्रति लगाव व निष्ठा के कई एक किस्से और दृष्टांत सुनाकर देशभक्ति का अर्थ उसके दिमाग मे उड़ेलने की कोशिश की, लेकिन उसको ये सब बताते हुए मुझे समझ मे ये आया कि देशभक्ति का अर्थ तो उसे अच्छे से पता है। वो कहना कुछ और चाहता था। उसने मुझसे जर्मन और अँग्रेजी मिश्रित हिन्दी मे जो पूछा, उसका अर्थ ये था कि अपनी धरती पर पैदा होने के कारण अपनी माँ की तरह उससे प्यार तो हम भी करते हैं, लेकिन हम ये नही समझ पाये कि आपलोग इतना देशभक्त क्यो होते हैं, देशभक्ति, देशभक्ति का इतना नारा क्यों लगाते हैं?

मै उसके इस सवाल से पहले तो थोड़ा अचकचाया, लेकिन फिर भी समझाने की पूरी कोशिश की। मैंने उसे बताया कि हम अपने अतीत पर गर्व कर सकते हैं, इसलिए गर्व करते हैं। इस धरती ने अनेक वीर और महापुरुष पैदा किये हैं, इसलिए हम इसका सम्मान करते हैं। हम अपने देश की सीमाओं की रक्षा करने के लिए जरूरत पड़ने पर जान देने के लिए भी तैयार रहते हैं। कारगिल युद्ध के दौरान हमारी सिविल सोसाइटी से बहुतों ने गाँव और शहर का भेद मिटाकर सीमा पर जाने के लिए आवेदन दे डाले थे। हम अपनी मिट्टी को, अपनी प्रकृति को प्यार करते हैं। हम कृषि प्रधान देश हैं। हम आध्यात्मिक देश हैं। हम राम और कृष्ण के वंशज हैं। हमारा इतिहास गौरवशाली इतिहास है—आदि आदि आदि आदि। इस तरह हमने अपनी देशभक्ति के पीछे के हज़ार कारण उन दोनों को देर तक गिनवाए, लेकिन लक्ष्य ये किया कि उन दोनों का माथा सिकुड़ा ही रहा। फिर मैंने ही पूछा कि तुमलोग हमारी तरह देशभक्ति फील क्यो नही करते? मेरे इस सवाल का जवाब आन्या ने दिया।

वह बोली-हम इसलिए देशभक्ति फील नही करते क्योंकि हमारा इतिहास गौरवशाली नही है। हमारे यहाँ वीर भी पैदा नही हुए, महापुरुष भी नही और भगवान भी नही। हम ध्यान से सुन रहे थे और उसका मानस परखने की कोशिश कर रहे थे। वह कह रही थी कि हमारे इतिहास में एक हिटलर पैदा हुआ था। हम कहीं बहुत भीतर तक महसूस करते हैं कि हमारे इतिहास की इस एक घटना ने जर्मनी की पूरी सभ्यता, हमारे तमाम गौरवशाली इतिहास और हमारे गर्व कर सकने लायक हमारी पूरी राष्ट्रीय परम्परा पर धूल की मोटी परत डाल दी। इतना समय बीत जाने के बाद आज भी हमारी पीढ़ी के लोग अपने इतिहास के उस कालखंड पर शर्मिन्दगी महसूस करते हैं। हम सभी बड़ी खामोशी से सुन रहे थे कि तबतक अचानक आन्या ने कुछ खास कह दिया। मुझे लगा कि मेरी बातों से उनका समाधान चाहे नहीं हुआ हो, पर उनकी बातों से शायद मेरा समाधान हो गया।

वह अचानक थोड़ी देर के लिए चुप होकर बोली-किताबों में गौरवशाली-गौरवशाली करके लिखा बहुत कुछ है, लेकिन हम कभी हिटलर को नही भूलते। हम गोयबल्स को नही भूलते। हम उन किताबों को नही पढ़ते, नहीं पढ़ना चाहते, जिनमें झूठा इतिहास लिखा पड़ा है, जिनमें काल्पनिक बातें लिखी रखी हुई हैं, जिनमें जर्मनी को महान-महान लिखा हुआ है। हम उन किताबों की खोज मे रहते हैं, जिन्हे गोयबल्स ने जला डाला था। वह अकेली बोल रही थी। मै, फैबियन और बाकी लोग सिर्फ सुन रहे थे। वह कह रही थी--हम लोग स्टूडेंट्स हैं। हम सोचते हैं कि क्यों न हम खुद जर्मनी को महान बनाएँ। हम चाहते हैं कि अगर मिटा सकें तो हिटलर का नाम रबर से मिटा दें। हम अपने गौरवशाली इतिहास की फिराक मे नही, हम अपने लिए गौरवशाली भविष्य की फिराक मे रहते हैं।

उस दिन का क्लास तो उसी दिन खत्म हो गया, लेकिन आन्या द्वारा दिया मिला हुआ सबक मुझे फिर कभी नहीं भूला। उस दिन का टीचर मैं नहीं था। उस दिन की टीचर आन्या थी। मुझे लगता है कि आज हमारे देश को, हमारी वर्तमान पीढ़ी को हमारे नौजवानों को यह सबक याद करने की जरूरत है। उन दोनों के जाते-जाते मैंने आन्या से कहा भी कि इन छः महीनों में मुझे नहीं मालूम कि मैं तुम्हें कितनी हिन्दी सिखा सका, पर तुम दोनों यह जरूर याद रखना कि तुमने हमें एक बेहद जरूरी पाठ पढ़ाया है। मैंने उनसे वायदा किया था कि मैं यह संस्मरण लिखूंगा। ❑

नौजवान आओ रे!

गांधी का असहयोग आंदोलन हो, जेपी का संपूर्ण क्रांति आंदोलन हो या अन्ना का भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन हो, समाज में सुधार के लिए जब भी और जहां भी जरूरत पड़ी है, युवाओं ने हमेशा आगे बढ़ चढ़कर अपनी भागीदारी सुनिश्चित करायी है। समाज परिवर्तन युवा शक्ति द्वारा ही संभव है। यह विचार हमारे समाज व साहित्य में बीज रूप में पड़ा हुआ है। डॉ. एस. एन. सुब्बाराव कहते हैं कि व्यक्ति उम्र से नहीं, मन से युवा होता है। अगर व्यक्ति में ऊर्जा है तो हर व्यक्ति जवान है।

आजकल हर राजनीतिक पार्टी युवाओं से राजनीति में आने और राजनीतिक गंदगी साफ करने का आहवान करती है। नेता कहते हैं कि राजनीति में जो गंदगी आ गयी है, उसे युवा ही समाप्त कर सकता है। वहीं युवा सोचता है कि राजनीति गंदी जगह है, इसलिए हम इसका हिस्सा नहीं बनेंगे। मैं भी मानता हूं कि युवाओं को राजनीति में आना चाहिए और साफ सुथरी राजनीति का श्रीगणेश करना चाहिए, उसका हिस्सा बनना चाहिए। इसके साथ-साथ मेरा यह भी मानना है कि युवाओं को समाज सेवा के क्षेत्र में आकर समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी भी निभानी चाहिए। युवाओं की बड़ी संख्या नशे व बेरोजगारी का शिकार हो रही है। इन समस्याओं के कारण युवा हिंसा पर उतारू हो रहा है। अगर देश की युवा शक्ति सरकार पर निर्भरता छोड़कर स्वरोजगार की तरफ कदम बढ़ाये तो दूसरे युवाओं को भी रोजगार प्राप्त हो सकेगा। यह बड़ी समाज सेवा होगी।

'एक घन्टा देह को और एक घन्टा देश को' यह सूत्र युवाओं के लिए बहुत लाभकारी हो सकता है। क्योकि आज हमारे सामने बहुत सी विकट समस्याए है। हमें युवाओं से संवाद करना है।

युवाओं को सरकार के भरोसे नहीं बैठना चाहिए। सरकारी युवा संगठनों में युवाओं की उम्र 35 वर्ष से घटाकर 29 वर्ष कर दी गई है। उसे फिर से 35 वर्ष कराने के लिए अपनी मांग अधिकारपूर्वक सरकार तक युवा संवाद के माध्यम से पहुंचानी चाहिए। 29 वर्ष की आयु के बाद युवा क्या युवा नही रहते? ये सरकार से पूछना चाहिए। युवाओं को सहयोग की जरुरत है। देश-समाज का भविष्य इन्ही के हाथों में है। युवाओं को जिम्मेदारी दें, युवाओं पर विश्वास करें, वरिष्ठ लोग अपना अनुभव उनके साथ साझा करें। आज के युवाओं के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करें, इसके लिए सभी को आगे आना होगा। **–गौतम के. 'गट्स'**

सामाजिक कार्यकर्ता

लोक-विमर्श

लोकतंत्र के लिए खतरा

पिछले पांच सालों में सरकार के क्रियाकलापों से एकदम स्पष्ट हो गया है कि उन्होंने इस देश के लोकतंत्र व संविधान को कुचलते हुए अपने घोषित लक्ष्य हिन्दू राष्ट्र की अपनी तैयारियों को पुख्ता किया है। सभी संवैधानिक संस्थाओं पर मनमाने तरीके से हस्तक्षेप किया है, यहां तक कि न्यायपालिका तक को प्रभावित किया है। जिससे पूरा देश आक्रांत है। इसके विरोध में कुछ भी बोलने वालों को तत्काल देशद्रोही घोषित कर देश छोड़कर पाकिस्तान जाने की हिदायत दी जाती है। आज पूरा देश अघोषित आपातकाल की जेल बना दिया गया है तथा सच बोलने वाले वैज्ञानिकों, साहित्यकारों व पत्रकारों को मारकर जनता को डरा, धमकाकर अपने पक्ष में लामबंद करने की कोशिशें हो रही हैं।

सरकार द्वारा मूल मुद्दों से भटकाकर मुस्लिम आतंकवाद के नाम पर जनता को गुमराह किया जा रहा है, जिससे हिन्दू वोटों का ध्रुवीकरण कर पुनः सत्ता हासिल की जा सके। केन्द्रीय मंत्री जयंत सिन्हा ने अपराधियों के जेल से रिहा होने पर उनका माला पहनाकर खुलेआम सम्मान किया। वहीं यूपी के मुख्यमंत्री अपराधियों की पैरवी करने के साथ ही गौरक्षा के नाम पर लोगों की हत्या करने वालों की परोक्ष वकालत कर रहे हैं।

केन्द्र की सत्ता में आने के बाद संघ से जुड़े बम कांड व हत्या के सभी अपराधियों को बरी कर दिया गया। यूपी में गांधी के हत्यारे गोडसे का मंदिर बनाकर व गांधी की मूर्ति पर गोली चलाकर मारने का नाटक अभी भी जारी है। गांधी हत्या, बाबरी विध्वंस तथा गुजरात हत्याकांडों के कारण जिन्हें जेल में होना था, वे सत्ता पर काबिज हो गये। प्रधानमंत्री खुद हिन्दू आतंकवाद पर लोगों को गुमराह कर 2019 का चुनाव हिन्दू वोटों के ध्रुवीकरण, धनबल व मीडिया के सहयोग से तरह-तरह के झूठ बोलकर जीतना चाहते हैं।

आरएसएस के घृणित हिन्दू राष्ट्र के मकसद का पर्दाफाश करने के लिए चुनावों में सभी लोकतांत्रिक ताकतों, किसानों, मजदूरों, दलितों, महिलाओं, अल्पसंख्यकों, साहित्यकारों, वैज्ञानिकों, रंगकर्मियों व बेरोजगार नौजवानों को साथ लेकर देश की राजधानी व प्रदेशों की राजधानियों में इनके खिलाफ सच्चाई के साथ मतदाताओं को जागृत कर इनको हराने की जरूरत है। देश में वर्तमान अराजक हालात के खिलाफ खुलकर खड़े होने का समय आ गया है।

समर शेष है नहीं पाप की भागी केवल व्याध,
जो तटस्थ है समय लिखेगा उनका भी अपराध।

–राजेन्द्र कुम्भज

मंत्री, राजस्थान प्रदेश सर्वोदय मंडल

वर्तमान संदर्भ में हमारी जिम्मेदारी

वर्तमान परिस्थितियों में देश भारी संकट के दौर से गुजर रहा है।क्योंकि आजाद हिंदुस्तान में ऐसा पहले कभी नहीं देखा गया कि शासन, प्रशासन व उनसे जुड़ा पूरा सरकारी तंत्र हमारी राष्ट्रीय एकता, अखंडता व अमनचैन के लिए सबसे घातक मानी जाने वाली सांप्रदायिकता और उसको फैलाने वाले संगठनों व लोगों पर लगाम कसने के बजाय उन्हें एक प्रकार का संरक्षण देता दिखाई पड़ता हो।यही नहीं,करोड़ों मतदाताओं द्वारा दी गई इसी ताकत का दुरुपयोग करके अपनी सांप्रदायिक राजनीति व शासकीय तानाशाही के दम पर पहले सत्ता पाने के लिए और अब उसे आगे और पांच साल कायम रखने के लिए संकीर्ण राष्ट्रवाद व छद्म देशभक्ति जैसे उन्मादक नारों से पूरे देश की जबरन घेराबंदी करने का प्रयास भी किया जा रहा है।इसी प्रयास में 2019 के इस लोकसभा चुनाव को एयरस्ट्राइक, आतंकवाद व मंदिर-मस्जिद जैसे भावनात्मक मुद्दों के इर्द-गिर्द केंद्रित कर दिया गया है। जिससे शिक्षा, स्वास्थ्य, गरीबी, रोजगार, महंगाई, न्याय, असमानता, मजदूर शोषण, नागरिक सुरक्षा, महिला उत्पीड़न, अभिव्यक्ति की आजादी व किसानों की दुर्दशा जैसे जनहित के अहम मुद्दे चुनावी चर्चा व राजनीतिक दलों की घोषणाओं से लगभग बाहर हो गये हैं। अब यहां सवाल यह है कि इस अराजक, आक्रामक व अवसरवादी माहौल में देश के जागरूक नागरिक व गांधीजन होने के नाते व एक संगठन के तौर पर हमारी क्या जिम्मेदारी बनती है? मेरे हिसाब से तो इसका सीधा व एकमात्र जवाब यही है कि हम जहां हैं वहां और संगठनात्मक स्तर पर जहां-जहां भी देश भर में पहुंच सकते हैं, वहां लोगों यानी मतदाताओं के बीच ऐसा वातावरण बनाने की पुरजोर कोशिश करें कि देश व आम जनता-जनार्दन को सांप्रदायिक तानाशाही व अराजकता के गलघोंटू फंदे में फंसाने की साजिश में जुटी अनैतिक, अलोकतांत्रिक, सांप्रदायिक व तानाशाह शक्तियां हरगिज दोबारा सत्ता में न लौट सकें! क्योंकि अगर वे सत्ता में लौटीं तो इन पांच सालों की तरह ही आगामी पांच साल के लिए देश एक बार फिर न केवल उनका बंधक बन कर रह जाएगा, बल्कि सांप्रदायिक आधार पर देश के एक और विभाजन का खतरा भी पैदा हो जाएगा। **–सतीश मराठा**

गांधी विचार परीक्षा

तमिलनाडु गांधी-150 समिति ने स्कूलों के छात्र-छात्राओं के बीच गांधी विचार परीक्षाओं का आयोजन किया। हमारे अभिभावक नटराजन जी के मार्गदर्शन में गांधियन शिक्षकों की टीम ने प्रतिभागियों के प्रदर्शन के आधार पर हर स्कूल से तीन टॉपर विद्यार्थियों का चयन किया। सफल घोषित विद्यार्थियों को पुरस्कार स्वरूप गांधी विचार पर आधारित पुस्तकें बांटी गयीं। मदुरै पंचायत संघ के करचरी सक्कुड़ी श्री निवासनगर स्कूल के प्रांगण में आयोजित पुरस्कार समारोह में 2 अप्रैल को डॉ. मुथुलक्ष्मी, डॉ. सेतुलस्र्की और टी. राजेन्द्रन की टीम ने छात्रों को पुरस्कार बांटे। उल्लेखनीय है कि तमिलनाडु गांधी-150 समिति की ओर से लगभग 40 स्कूलों में करायी गयी गांधी विचार परीक्षा में सफल 120 विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया।

–एस.टी. राजेन्द्रन

साझे सरोकार से स्थापित हो रचनाधर्मिता

गांधी शांति प्रतिष्ठान एवं साझा संगठनों के संयुक्त तत्त्वावधान में गणेश शंकर विद्यार्थी की शहादत को याद किया गया। सांझी शहादत, सांझी विरासत के लिए आयोजित संगोष्ठी में अमर शहीदों की शहादत से सबक लेने की जरूरत महसूस की गयी। स्थानीय हरिहरनाथ शास्त्री भवन में नगर के दो दर्जन संगठनों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। अमर क्रांतिकारियों की शहादत का वाकया बयान करते हुए वरिष्ठ समाजसेवी रामकिशोर बाजपेई ने कहा कि 23 मार्च 1931 को शहीदे आजम भगत सिंह, शहीद सुखदेव और राजगुरु ने इंकलाब जिन्दाबाद का नारा बुलंद करते हुए शहादत दी थी। इनकी शहादत पर पूरा देश कराह उठा था। जगह-जगह प्रतिक्रियाएं हुईं थीं। ब्रिटिश हुकूमत ने आमजन की शक्ति और प्रतिरोध को बांटने की नीयत से कानपुर में साजिशन दंगे करवाये। उसी दंगे को रोकने के लिए प्रखर पत्रकार एवं स्वतंत्रता संग्राम सेनानी गणेश शंकर विद्यार्थी कानपुर की सड़कों पर उतरे। झुलसते शहर में इंसानी तहजीब और इंसानी समानता के पक्षधर पत्रकार ने 25 मार्च 1931 को अपनी आहुति दे दी। विद्यार्थीजी की वैचारिकता पर प्रकाश डालते हुए पद्मश्री गिरिराज किशोर ने कहा कि उनका मानना था कि हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य दूर करने का एकमात्र तरीका यही है कि साझे सरोकार से रचनाधर्मिता स्थापित हो। हमारे लोग ग्राम संगठन के काम को हाथ में लेकर बिना भेदभाव के भारत के दीन हीन किसानों की सेवा करें। उसी तरह शहरों के मिलों में काम करने वाले लाखों मजदूरों को संगठित करने की जरूरत है। विद्यार्थी जी कहते थे कि किसानों और मजदूरों का युग आ गया है। अब बांटने वाली राजनीति से काम नहीं चलेगा। बंटवारे की राजनीति से देश का भला नहीं होने वाला। वरिष्ठ समाज सेवी अतहर नईम ने अपने वक्तव्य में साझा विरासत में भरोसा रखने पर जोर दिया। वरिष्ठ अधिवक्ता सईद नकबी ने एक दूसरे की मजहबी रवायतों, रस्मों रिवाजों की हिफाजत पर जोर दिया। समाज की अहम जरूरत है आपसदारी, आपसी भरोसा और हमदर्दी। इंसानियत के लिहाज से ये बहुत जरूरी है। अन्य वक्ताओं में डॉ. ज्योति गुप्ता, वरिष्ठ पत्रकार नीरज तिवारी, दिनेश प्रियमन, बिंदा भाई, नदीम फारूखी, डॉ. आनंद शुक्ला, क्रांति कुमार कटियार, दीपक मालवीय, राकेश मिश्रा आदि शामिल रहे। कार्यक्रम का संचालन पीयूसीएल के संयोजक आलोक ने किया।**–बिन्दा भाई**

गतिविधियां एवं समाचार

कस्तूरबा स्मृति सम्मेलन सम्पन्न

बा की 150वीं जयंती पर कस्तूरबा राष्ट्रीय स्मृति सम्मेलन 11-12 अप्रैल 2019 को पोरबंदर में संपन्न हुआ, जिसमें दस राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन का उद्घाटन तुषार गांधी ने किया। कस्तूरबा के ऊपर यह पहला राष्ट्रीय कार्यक्रम था। इसकी विस्तृत रिपोर्ट सर्वोदय जगत के अगले अंक में दी जायेगी, जो 1 से 31 मई संयुक्तांक होगा।

बोल रहा है संत विनोबा

–डॉ. लल्लन

संत विनोबा बोल रहा है करके ऊंची बांह रे।
ग्रामदान से बन जायेगा गोकुल अपना गांव रे।

भूमिहीन को भूमि मिलेगी, भूखे को दाना-पानी,
बराबरी के भाव जगेंगे समता का बरसे पानी,
झगड़े-झंझट दूर हटेंगे सुखद शांति की हवा चले,
ग्रामराज के तालाबों में आजादी का कमल खिले।

बेकारों को काम मिलेगा बेमकान को ठांव रे।
ग्रामदान से बन जायेगा गोकुल अपना गांव रे।।

शोषणमुक्त समाज बनेगा चरखे का सूरज निकले,
अरे प्रेम से मानव तो क्या पत्थर से पानी पिघले।
दूर भगेगा अंधियारा सब फूट गुलामी का काला,
महलों से खिंचकर आयेगा झोपड़ियों में उजियाला।
हृदय जुड़ेंगे, स्नेह जगेगा, लगे प्रेम का दांव रे।
ग्रामदान से बन जायेगा गोकुल अपना गांव रे।

नयी योजना बने सृजन की मिलकर कदम बढ़ायेंगे,
गांव बने परिवार सरीखा, सब मिल खेलें खायेंगे।
एक बनेंगे, नेक बनेंगे और नया निर्माण करें,
खुद ही देवें, खुद ही लेवें, ऐसा अद्भुत दान करें।

ग्रामसभा की बैठक में हों सभी पास प्रस्ताव रे।
ग्रामदान से बन जायेगा गोकुल अपना गांव रे।

गांधी का सपना सच होगा, मिलकर जोर लगायेंगे,
जय जगत् के नारे से हम विश्व-व्योम गुंजायेंगे।
ग्रामदेव की पूजा करने जाति-पांति सब छोड़ेंगे,
मानव, मानव एक जात है, ऐसा नाता जोड़ेंगे।

गीता और कुरान मिलेंगे, कर-कर लंबी बांह रे,
ग्रामदान से बन जायेगा गोकुल अपना गांव रे।

कविता

सुरम्य शान्ति के लिए, जमीन दो, जमीन दो!

सुरम्य शान्ति के लिए, जमीन दो, जमीन दो,
महान् क्रान्ति के लिए, जमीन दो, जमीन दो।

जमीन दो कि देश का अभाव दूर हो सके,
जमीन दो कि द्वेष का प्रभाव दूर हो सके,
जमीन दो कि भूमिहीन लोग काम पा सकें,
उठा कुदाल बाजुओं का जोर आजमा सकें,
महा विकास के लिए, जमीन दो, जमीन दो।
नये प्रकाश के लिए, जमीन दो, जमीन दो।

जमीन दो, समाज से कड़ी पुकार आ रही,
जमीन दो कि एक मांग बारबार आ रही।
जमीन मातृ-रुपिणी, पुनीत है, पवित्र है,
जमीन, वारि, वायु का समान ही चरित्र है
पुनीत कर्म के लिए जमीन दो, जमीन दो,
नवीन धर्म के लिए, जमीन दो, जमीन दो।

जमीन चाहिए समाज के समत्व के लिए,
स्वराज्य के लिए, स्वदेश के महत्त्व के लिए।
मनुष्यता के मान के लिए जमीन चाहिए,
बहुत दुखी किसान के लिए जमीन चाहिए।
विपन्न, निःस्व के लिए जमीन दो, जमीन दो,
क्षुधार्त्त विश्व के लिए जमीन दो, जमीन दो।

जमीन दो कि शान्ति से नया समाज ला सकें,
जमीन दो कि राह विश्व को नई दिखा सकें,
जमीन दो कि प्रेम से समत्व-सिद्धि पा सकें,
जमीन दो कि दान से कृपाण को लजा सकें।
सुरम्य शान्ति के लिए, जमीन दो, जमीन दो,
महान क्रान्ति के लिए, जमीन दो, जमीन दो।

(पटना, 1953)

–राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

मुक्तक

–नसीर अहमद

नया इतिहास लिखने-लिखाने का समय फिर आ गया,
तस्वीर में रंग भरने-सजाने का समय फिर आ गया
नींद त्यागो घर से निकलो सोचो समझो वोट डालो
जनतंत्र की इज्जत बचाने का समय फिर आ गया।

ये नहीं अच्छे, उन्हें लाओ यही सब आजमाने में
काट दी पौना सदी पछताने में आंसू बहाने में
माना लुटेरे हैं सभी गलती हमारी कम नहीं है
हम भी बंटे हैं मजहबों-जातियों के कारखाने में।

राम राज्य का सपना देने वाले हर नेता में राम न देखो
त्रेता नहीं ये कलयुग है शबरी के ऊंचे धाम न देखो
आज परीक्षा की बेदी पर रखा हुआ है वोट तुम्हारा
उठो बचा लो आन देश की जाति धर्म के नाम न देखो।

कवि लेखक सब बंटे हुए हैं, अपने अपने खेमों में
तरकश के हर तीर जुटे हैं केवल जख्म पिरोने में
अब कबीर तो नहीं आयेंगे लाठी ले बाजार में
लोई कब से पका रही है आंसू स्वयं भगोने में।

तुम्हारा वोट ही तो मुल्क की तकदीर लिखेगा
गंगा में पावन जल तिरंगे में वही कश्मीर लिखेगा
जरा सी भूलकर बैठे तो फिर पछताओगे यारो
दुःशासन के हांथों में द्रोपदी का चीर लिखेगा।

चाह रहे हो हिमगिरि का मस्तक और उठाना
सोच रहे हो भारत मां का बाकी कर्ज चुकाना
कसम तुम्हे है आज शहीदों के बलिदानों की
लोकतंत्र के मंदिर में मत दागी फूल चढ़ाना।

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार।